अनंदपुर साहिब

तख़त श्री केसगढ़ साहिब, अनंदपुर साहिब

डा॰ हरजिंदर सिंघ दिलगीर

सिक्ख इतिहास रीसर्च बोर्ड
शिरोमणी गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी,
अमृतसर ।

१ओं वाहिगुरु जी की फ़तह ॥

अनंदपुर साहिब

डा० हरजिंदर सिंघ दिलगीर

प्रकाशक :

सिक्ख इतिहास रीसर्च बोर्ड

शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी,

अमृतसर ।

अनंदपुर साहिब

लेखक

डा॰ हरजिंदर सिंघ दिलगीर

अनुवादक

डा॰ बलविंदर कौर

प्रकाशक

डा: गुरबचन सिंघ बचन

सक्रेटरी, शि: गु: प्र: कमेटी, अमृतसर।

मार्च २००० ५०००

छापने वाले

गोल्डन आफ़सैट प्रिंटिंग प्रैस, अमृतसर ।

डा. रजिन्द्र कौर
(सपुत्री मास्टर तारा सिंघ जी)
के नाम

विषयानुक्रम

१७. कीरतपुर के गुरुद्वारे

गुरुद्वारा चरन कंवल, शीश महल, तख़्त साहिब, दमदमा साहिब, हरिमंदर साहिब, चुबच्चा साहिब, मंजी साहिब, तीर साहिब, पतालपुरी, बिबानगढ़ साहिब, गु: बाबा गुरदित्ता, गुरुद्वारा जिंदबड़ी साहिब,

१८. अनंदपुर साहिब और कीरतपुर के रास्ते में गुरुद्वारे

बरोटा साहिब, मिट्ठासर साहिब, भोगपुरा

१९. अनंदपुर साहिब से संबधित गुरुद्वारे

निरमोहगढ़, बसाली, कलमोट, बजरूड़, बस्सी कलां

२०. अनंदपुर साहिब से दूर कुछ गुरुद्वारे

बिलासपुर, रिवालसर, नदौण, नाहन, पाऊंटा, भंगाणी

२१. गुरु साहिब की अन्तिम यात्रा के गुरुद्वारे

शाही टिब्बी, भट्ठा साहिब, चमकौर

२२. कुछ अन्य गुरुद्वारे

बिभौर साहिब, बानगढ़ साहिब, दमदमा साहिब, गुरपलाह

२३. अनंदपुर साहिब का होला महल्ला

२४. नैणा देवी

२५. अनंदपुर साहिब की वैसाखी

दो शब्द

अनंदपुर साहिब सिक्खों की धार्मिक, राजनैतिक और सैनिक राजधानी थी । यह शिक्षा का बहुत महत्तवपूर्ण केन्द्र था । यह विद्वानों, बुद्धिमानों और कलाकारों की यूनीवर्सिटी थी । यह बेसहारों और सताये लोगों का आश्रय-स्थल था ।

यहाँ गुरु तेग़ बहादुर साहिब, गुरु गोबिंद सिंघ साहिब और चार गुरु साहिबान के परिवारों की मुहब्बत की खूशबु है । यहाँ सैकड़ों सिक्खों ने शहीदी पाई । यहाँ की मिट्टी में उन शहीदों और संघर्ष करने वालों के रक्त पसीने की बूँदे मिली हुई है । अनंदपुर साहिब का कण-कण गुरु साहिब के कदमों के स्पर्श और शहीदों की कुर्बानियों की यादगार है । सिक्ख को यह अहसास होते ही दिल चहता है कि यहाँ पाँव धीरे से रखा जाये और प्रत्येक कदम पर सिक्ख इतिहास को याद किया जाये ।

काफ़ी समय से अनंदपुर साहिब के इतिहास के सम्बंध में एक अच्छी किताब की कमी महसूस हो रही थी । इस वर्ष सिक्ख पंथ खालसा प्रगट करने के तीन सौ वर्ष पूरे होने के सम्बंध में दुनियां भर में समारोह हो रहे है । इस सम्बंध में लाखों सिक्ख अनंदपुर साहिब के दर्शन करने आ रहे है । इस समय ऐसी किताब की और भी अधिक आवश्यकता महसूस हो रही थी । इस लिए शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी ने अनंदपुर साहिब का इतिहास और गुरु स्थानों के सम्बंध में किताब लिखने की सेवा सिक्ख विद्वान डा० हरजिंदर सिंघ दिलगीर को सौंपी थी । डा० दिलगीर ने इस किताब में कीरतपुर साहिब, चक्क नानकी और अनंदपुर साहिब की नींव रखने से आज तक के इतिहास की महत्त्वपूर्ण सामग्री दी है और कीरतपुर साहिब और अनंदपुर साहिब के साथ-साथ उन गुरुद्वारों के सम्बंध में भी जानकारी भी दी है जो गुरु साहिबान के इन नगरों में रहते समय की घटनाओं

से सम्बंधित है । इस किताब में गुरु गोबिंद सिंघ साहिब के युद्धों में शहीद होने वाले सिंघों के नाम इस किताब के महत्त्व को और भी बढ़ा देते है । आज तक इन में से अधिकतर शहीदों और सेनापतियों के नामों के सम्बंध में साधारणत: सिक्खों को बहुत कम जानकारी थी । किताब में गुरुद्वारों की तस्वीरों ने इस का महत्त्व और भी बढ़ा दिया है । आशा है पाठक इस किताब से भरपूर लाभ उठायेगें ।

जगीर कौर
प्रधान, शि. गु: प्र: कमेटी,
अमृतसर ।

प्रस्तुती

अनंदपुर साहिब का नाम सुनते ही एक सच्चे सिक्ख के राये खड़े हो जाते है, शरीर में झनझनाहट होने लगती है, बाजूओ में रक्त दौड़ने लगता है ।

तख़्त केसगढ़ साहिब पर माथा टेकते ही जापु साहिब की गुंजार आत्मा में ताज़ी होने लगती है । अनंदगढ़ किले से चंडी की वार के वातावरण की सुगंधी आने लगती है । सीस गंज पर माथा टेकते ही सर्व धर्म रक्षक की शहीदी का दृश्य आँखों के सामने आ जाता है । दमालगढ़ मंजी साहिब में गुरु साहिब के साहिबज़ादे शस्त्र चलाते महसूस होते है । थड़ा साहिब में लगता है जैसे दीवान लगा हो और पंडित कृपा राम (सिंघ) दत्त और सोलह और ब्राह्मण गुरु साहिब से सुरक्षा और सरप्रस्ती मांग रहे हो । दमदमा साहिब में भाई मनी सिंघ गुरु ग्रंथ साहिब का स्वरुप तैयार करते दिखते है । गुरु के महल में माता नानकी, माता गुजरी, माता जीत कौर, माता सुंदर कौर, माता साहिब कौर के द्वारा संगतों के लिये लंगर (भोजन) तैयार करने का अहसास होता है । अकाल बुंगा, भोरा साहिब, मंजी साहिब, थड़ा साहिब, दमदमा साहिब में भी गुरु तेग़ बहादुर साहिब और गुरु गोबिंद सिंघ साहिब के दीवानों की याद आती है । गुरु का लाहौर में गुरु साहिब के अनंद कारज (विवाह) का दृश्य याद आने लगता है ।

केसगढ़ साहिब से अनंदगढ़ साहिब की ओर नज़र करते पहली वैसाख के दिन खालसा प्रगट करते समय के कौतुक का दृश्य आँखों के सामने घूम जाता है । भाई चउपति राय, भाई मनी सिंघ सीस भेट कौतुक के दिन के समारोह का प्रबंध करते और भाई दया सिंघ, भाई मोहकम सिंघ, भाई साहिब सिंघ, भाई धर्म सिंघ, भाई हिम्मत सिंघ पहले पाँच खालसे प्रगट होने के लिये तैयार-बर-तैयार खड़े महसूस होते है । लोहगढ़ किले के

गुरुद्वारे पर पहुँचते ही भाई बचित्र सिंघ बरछा ले कर पहाड़ी सेना की ओर से भेजे शराबी हाथी का मुँह मोड़ता और भाई उदय सिंघ केसरी चंदका सिर काट कर भाले पर लटकाये अनंदगढ़ किले की ओर जाता दिखाई पड़ता है । अनंदगढ़ किले पर पहुँचते रणजीत नगाड़े की थाप दिल को हिला देती है किन्तु साथ ही माता गुजरी, चार साहिबज़ादों और चार सौ साठ सिंघों और गुरु साहिब तथा चालीस सिंघों के दो अलग-अलग दल निकलने का, ५-६ दिसम्बर १७०५ की रात का, उदास सा दृश्य भी याद आ जाता है । भावुक सा दिल कह उठता है कि किसी रात हम भी

''मितर पिआरे नूँ हाल मुरीदाँ दा कहिणा''

कहने के लिये गुरु साहिब के कदमों के निशान की खुशबू लेते उस के कदमों के स्पर्श से पवित्र हुये रास्ते पर चल कर नंदेड़ तक जाये और नंदेड़ से अनंदपुर साहिब की ओर आये ।

इस किताब में अनंदपुर साहिब, चक्क नानकी, कीरतपुर साहिब, निरमोहगढ़, बिलासपुर, बसाली, कलमोट, बजरूड़, नाहन, पाऊँटा साहिब, भंगाणी, बिभौर साहिब, रिवालसर, कोटला निहंग, नंगल गुज्जरां (नंगल सरसा), चमकौर आदि की मिट्टी में बसी हुई गुरु साहिब के कदमों की खुशबू को प्रस्तुत करने की कोशिश की गई है ।

आशा है यह किताब पाठकों के बहुत से सवालों का जवाब देगी । किन्तु, इस को अन्तिम न समझा जाये । प्रत्येक कीमती सुझाव और सुधार को आगामी ऐड़ीशन का श्रृगांर बनाया जायेगा । आशा है पाठक और सलाहकार अपने सुझाव अवश्य भेजेंगे ।

(डा० हरजिंदर सिंघ दिलगीर)
भूतपूर्व डायरैक्टर, सिक्ख इतिहास रीसर्च बोर्ड
अमृतसर ।

अनंदपुर साहिब

चक्क नानकी का इतिहास

जुध जीत आये जबै टिकै न तिन पुर पाँव ।
कहिलूर मै बांधिओ आन अनंदपुर गाँव ।।

आज जिस सारे इलाके को 'अनंदपुर साहिब' कहा जाता है उसमें चक्क नानकी और अनंदपुर साहिब के साथ-साथ आस-पास के गाँवों की कुछ ज़मीन भी शामिल है । साधारणत: यह कह दिया जाता है कि अनंदपुर साहिब गुरु तेग़ बहादर साहिब ने १६६५ में बसाया था । किंतु वास्तव में अनंदपुर साहिब गाँव की नींव गुरु गोबिन्द सिंघ साहिब ने १६८९ में रखी थी । १६६५ में गुरु तेग़ बहादर साहिब ने जिस 'चक्क नानकी' गाँव को बसाया था वह केसगढ़ साहिब की सड़क के नीचे, चौक से चरणगंगा और अगमगढ़ के बीच का इलाका था ।

नये नगर बसाना, लोगों के लिए ज़िन्दगी की ज़रूरतें उपलब्ध करना सरकारों और शहनशाहों का काम हुआ करता है । सिक्ख कौम की विशेषता है कि इस के संस्थापक गुरु नानक साहिब से गुरु गोबिन्द सिंघ साहिब तक सभी गुरु साहिबान ने नये-नये नगर बसाये या छोटे-छोटे गाँवों को आबाद कर के नगर बना देने तक पहुँचाया । सिक्ख इतिहास में सब से पहला सिक्ख नगर करतारपुर (पाकिस्तान) है जो गुरु नानक साहिब ने बसाया था । वैसे गुरु नानक साहिब के कदमों के स्पर्श से पवित्र और महान् हो जाने वाले नगरों में नानकाना साहिब (पहले 'राय भोइ दी तलवंडी') और सुल्तानपुर भी बाद में सिक्ख नगर बन गए थे । गुरु अंगद साहिब ने छोटे से खडूर को खडूर साहिब बना दिया । गुरु अमर दास साहिब ने गोइन्दवाल साहिब बसाया । उन्होंने गुरु रामदास साहिब को माझे के केन्द्र में एक नया नगर बसाने के लिये भी कहा । गुरु रामदास साहिब ने 'गुरु का चक्क' की नींव रखी जो बाद में चक्क रामदास और अब

अमृतसर नाम से जाना जाता है । पाँचवें नानक गुरु अर्जुन साहिब ने "गुरु का चक्क" को एक बड़े नगर के रूप में बसाया और साथ ही तरन तारन, करतारपुर (जालन्धर), छेहरटा, गोबिन्दपुर (अब हरिगोबिन्दपुर) नगर बसाये । छठे पातिशाह ने अकाल तख़्त साहिब प्रगट किया और साथ ही कीरतपुर साहिब की भूमि खरीद कर अपने बेटे बाबा गुरदित्ता को यहाँ नगर बसाने के लिये कहा । गुरु हरि राय साहिब ने कीरतपुर को बड़ा नगर भी बनाया और साथ ही साथ पुराने गाँव कल्याण पुर को भी बसाया (अब यह कीरतपुर का एक हिस्सा ही है) । गुरु हरिकृष्ण साहिब के समय तक कीरतपुर साहिब एक महत्त्वपूर्ण कस्बा बन चुका था । उन के कदमों के स्पर्श ने पंजोखड़ा को एक गाँव से नगर बना दिया और राजा जय सिंह मिरज़ा के बंगले के इलाके को "गुरुद्वारा बंगला साहिब" का हिस्सा बना दिया ।

मौजूदा अनंदपुर साहिब की नींव नौवें नानक गुरु तेग़ बहादर साहिब ने रखी थी । गुरु तेग़ बहादर साहिब पहले बकाला में ही रहते थे और बीच में छः साल आप असाम, बंगाल और बिहार की यात्रा पर भी चले गये थे । आप कुछ समय तलवंडी साबो और धमतान में भी रहे थे । अप्रैल १६६५ के दूसरे मध्य में आप कीरतपुर आ गये थे ।

चक्क नानकी की पृष्ठभूमि :

कीरतपुर आने के कुछ दिनों के बाद ही बिलासपुर की रानी चम्पा का मंत्री कीरतपुर आया । उस ने बताया कि बिलासपुर के राजा दीप चंद का देहांत २७ अप्रैल १६६५ के दिन हो गया है और रानी ने गुरु साहिब को राजा की सत्तारवीं पर १३ मई को बिलासपुर पहुँचने की प्रार्थना की है । गुरु साहिब १० मई १६६५ के दिन बिलासपुर पहुँच गये । चौथे दिन सत्तारवीं के बाद, गुरु साहिब ने वापिस लौटने की तैयारी शुरू की ।

जब गुरु तेग बहादर साहिब बिलासपुर के राजमहल से चलने लगे तब रानी चम्पा ने गुरु साहिब को रोक लिया । रानी को पता लग चुका था कि गुरु तेग़ बहादर साहिब कीरतपुर छोड़ कर धमतान में बसने की तैयारी कर रहे हैं । रानी चम्पा ने गुरु तेग़ बहादर साहिब की माता नानकी जी के चरण पकड़ लिये और प्रार्थना की कि वह गुरु साहिब को धमतान (बांगर

देश) जाने की जगह कहलूर (बिलासपुर) रियासत में रहने के लिये मनायें। रानी चम्पा ने कहा कि वह चाहती है कि गुरु साहिब की निगरानी में ही वह रहे। रानी ने कहा कि अगर गुरु तेग़ बहादर साहिब कीरतपुर साहिब की जगह कहीं और नया नगर बसाना चाहें तो वह भूमि अरदास करवाने के लिये तैयार है। रानी चम्पा के जज़बात और मुहब्बत देख कर माता नानकी जी ने गुरु साहिब को कहलूर रियासत से दूर न जाने के लिये सहमत कर लिया। गुरु तेग़ बहादर साहिब ने नया नगर बसाने का फ़ैसला किया किंतु उन्हों ने रानी चम्पा से नये नगर के लिये मुफ़्त भूमि लेने से इन्कार कर दिया। गुरु साहिब ने लोदीपुर, मीआँपुर और सहोटा गाँव की भूमि का एक रमणीक हिस्सा चुना और उस भूमि की रकम अदा की। रानी चम्पा ने उस राशि को भेंट (तोहफ़ा) समझ कर स्वीकार कर लिया।

''चक्क नानकी''-अनंदपुर साहिब की जगह की चुनाव क्यों ?

गुरु तेग़ बहादर साहिब अपने पिता गुरु हरिगोबिन्द साहिब की मुग़लों के साथ हुई लड़ाईयों में (१६३४-३५) लड़े थे। उन को मालूम था कि एक सुरक्षित नगर का भूगोल कैसा होना चाहिए। जब छठे नानक गुरु हरिगोबिन्द साहिब ने १६२४ में कीरतपुर की भूमि का चुनाव किया तो उन्हों ने उस इलाके की सब से अधिक सुरक्षित भूमि को चुना था। कीरतपुर साहिब के एक ओर पहाड़, दूसरी ओर सतलुज और तीसरी ओर सरसा नदी थी। इसके अतिरिक्त कई छोटी बड़ी पहाड़ियाँ और नाले भी थे जो कीरतपुर को दुश्मन के आक्रमण से काफी हद तक बचा सकते थे।

चक्क नानकी-अनंदपुर साहिब भी ऐसा ही महत्त्वपूर्ण सुरक्षित स्थान था। इसके आस-पास जंगल था। जंगल के साथ-साथ कई बरसाती नाले थे। ''चक्क नानकी'' के दो ओर से चरणगंगा नाले की सुरक्षा थी। दूसरी ओर नदी सतलुज बहती थी। (अब यह पाँच किलोमीटर दूर चली गई है)। तीसरी ओर मौजूदा केसगढ़ का पहाड़ और पीछे रियासत बिलासपुर के पहाड़ और जंगल थे। उस समय ''चक्क नानकी'' और नैना देवी के बीच जंगल था। केसगढ़ और अनंदपुर साहिब तक एक बड़ा पहाड़ भी नगर की सुरक्षा करता था। इस तरह यह इलाका शांत, और अकेला सा था। यहाँ धार्मिक और आध्यात्मिक वातावरण को कोई शोर भंग नहीं कर

सकता था । नालों और नदियों के पानी से भरपूर, यह उपजाऊ इलाका भी था और साल में एक बार अच्छी फसल भी दे सकता था । इसी तरह बड़ा सा नाला (जिस को १९ अगस्त १६६५ के दिन सिक्खों ने 'हिमैती' नाला का नाम दिया था) भी अनंदपुर साहिब को दुश्मन के आक्रमण से बचाता था ।

चक्क नानकी की नींव रखना :

१९ जून १६६५ सोमवार के दिन गुरु तेग़ बहादुर साहिब ने इस नये सिक्ख नगर की नींव रखवाई । नये नगर की नींव बाबा गुरदित्ता (बाबा बुढ्ढा के पड़पोते) ने गाँव सहोटा की सीमा पर माखोवाल के टीले पर रखी । गुरु तेग़ बहादर साहिब ने नये नगर का नाम अपनी माता (सुपत्नी गुरु हरिगोबिन्द साहिब) के नाम पर "चक्क नानकी" रखा । आगे के तीन महीने (मध्य जून से मध्य सितम्बर १९६५ तक) गुरु साहिब चक्क नानकी में ही रहे । इस दौरान गुरु साहिब का मकान बन चुका था । यह चक्क नानकी की पहली इमारत थी । आज कल इस स्थान पर गुरुद्वारा "गुरु के महल" बना हुआ है । इस समय (सितम्बर १६६५) तक गुरु साहिब का परिवार पटना में ही था ।

सितम्बर के आखिरी दिनों में गुरु तेग़ बहादुर साहिब "चक्क नानकी" से कीरतपुर, रोपड़, बनूड़, राजपुरा, सैफ़ाबाद, ढोडा, सुनाम, छाजली, लहरा गागा आदि में दर्शनाथियों को दर्शन देते हुए धमतान पहुँचे । उधर धमतान में भाई दग्गो ने गुरु साहिब के लिये घर बना लिया था । जब गुरु साहिब ने उसको रानी चम्पा के साथ किये वायदे के बारे में बताया तो वह बड़ा उदास हुआ । गुरु साहिब ने उन से वायदा किया कि वह धमतान में प्राय: आते रहा करेंगे । १३ अक्तूबर १६६५, दीवाली के दिन धमतान में बहुत बड़ा मेला लगा । हज़ारों सिक्ख गुरु साहिब के दर्शन करने आये । इस के कुछ दिन बाद गुरु साहिब बांगर देश के नज़दीक रोही के जंगल में शिकार करने गये । यहाँ आप को आलम खान ने शाही आदेश के अधीन बंदी बना लिया और दिल्ली ले जा कर औरंगजेब के आगे उपस्थित किया । औरंगजेब ने गुरु साहिब और उनके साथियों को शहीद करने का आदेश दिया । राजा जय सिंह मिरजा के पुत्र कुंवर राम सिंह ने बादशाह को ऐसा

करने से रोका । औरंगज़ेब ने गुरु साहिब को १६ दिसम्बर को मुक्त कर दिया । इस प्रकार गुरु साहिब लगभग दो महीने कैद में रहे । रिहाई के बाद गुरु साहिब तीन दिन राजा जय सिंह मिरजा के घर रहे और फिर उत्तर-प्रदेश, बिहार, बंगाल और असाम की यात्रा पर निकल गये । जून १६७० में गुरु साहिब वापिस दिल्ली पहुँच गये । आप कुछ दिन राजा जय सिंह के बंगले पर रहे और फिर रोहतक, कुरुक्षेत्र, पिहोवा की यात्रा करने के बाद अगस्त १६७० के आख़िरी सप्ताह में लखनौर पहुँचे । यहाँ पर २९ अगस्त १६७० के दिन (गुरु गोबिन्द सिंघ साहिब की दस्तार बंदी की गई) । कुछ दिन लखनौर रहने के बाद गुरु साहिब अम्बाला, कबूलपुर, सैफ़ाबाद, लहिल, लंग, मूलोवाल, सेखा, ठीकरीवाल, मल्ला, करतारपुर से होते हुए बकाला पहुँच गये । आप ने अगला डेढ़ साल बकाला में ही बिताया । इस प्रकार लगभग सवा छः साल गुरु साहिब अपने नये बसाये नगर "चक्क नानकी" में न जा सके ।

उस समय चक्क नानकी में कुछ घर बस चुके थे । वे गुरु साहिब का रास्ता देख रहे थे । उधर बिलासपुर की रानी चम्पा भी गुरु साहिब के दर्शनों की राह देख रही थी । इन सभी बातों की खबर गुरु साहिब को पहुँचती रहती थी । (गुरु) गोबिन्द सिंघ भी अपनी दादी जी के नाम पर बसे नगर को देखना चाहते थे । गुरु साहिब ने मार्च १६७२ में चक्क नानकी जाने का फ़ैसला कर लिया । बकाला से करतारपुर होते हुए गुरु साहिब मार्च १६७२ के आखिरी सप्ताह में "चक्क नानकी" पहुँच गये । २८ मार्च के दिन वैसाख की पहली तारीख के मौके पर हज़ारों सिख/दर्शनार्थी 'चक्क नानकी' पहुँचे । गुरु साहिब के आगमन का पता लगने पर फिर रौनक शुरू हो गई और दूर-दूर से संगत चक्क नानकी आने लगी ।

कुछ दिन बाद रानी चम्पा का मंत्री चक्क नानकी आया और गुरु साहिब को परिवार सहित बिलासपुर आने की प्रार्थना की । गुरु साहिब रानी को दर्शन देने के लिये बिलासपुर गये । गुरु साहिब के आने पर बिलासपुर नगर नई दुल्हन की तरह सजाया गया था । रानी चम्पा खुशी से फूली नहीं समा रही थी । रानी चम्पा और उस के पुत्र राजा भीमचंद ने गुरु जी का शाही 'स्वागत' किया । गुरु साहिब वहाँ तीन दिन रहे और फिर

चक्क नानकी लौट गये ।

गुरु तेग़ बहादुर साहिब मार्च १६७२ के आखिरी सप्ताह से १० जुलाई १६७५ तक चक्क नानकी में रहे । आप अप्रैल १६७३ में बिलासपुर भी गये । इस के बाद फिर सभी ओर से सिक्ख संगतें चक्क नानकी आने लगीं । इन दिनों में ही लाहौर से भाई हरिजस सुभिक्खी भी दर्शन के लिये आया । उस की बेटी बीबी जीतां (जीत कौर) की मंगनी (गुरु) गोबिन्द सिंघ साहिब के साथ १२ मई १६७३ के दिन की गई । इन दिनों ही गुरु तेग़ बहादुर ने भाई बजर सिंघ को (पुत्र भाई रामा) को (गुरु) गोबिन्द सिंघ साहिब को शस्त्र चलाने और घुड़-सवारी सिखाने की जिम्मेदारी सौंपी थी । १९७३ में ही भाई आलम चंद नच्यणा (पुत्र भाई दुर्गा दास मसंद) चक्क नानकी में आया । चक्क नानकी में प्रति दिन दूर-दूर से संगतें गुरु साहिब के दर्शन करने आने लगीं ।

कश्मीरी ब्राह्मणों का चक्क नानकी में आना :

२५ मई १६७५ के दिन, दूसरों के अतिरिक्त, कश्मीर के १७ ब्राह्मणों का एक दल भी चक्क नानकी आया । इन का नेता मटन वासी भाई किरपा राम दत्त (जो बाद में किरपा सिंघ बना) भी था । उन्हों ने गुरु साहिब से प्रार्थना की कि कश्मीर का मुसलमान (हाकम) अधिकारी हम लोगों को ज़बरदस्ती मुसलमान बना रहा है । हमारी किसी ने फरियाद नहीं सुनी । सिर्फ गुरु नानक साहिब के घर से ही हमें मदद की उम्मीद है । गुरु तेग़ बहादर साहिब ने उनको धैर्य बंधाया और कहा कि वाहिगुरु तुम्हारी मदद करेगा । कुछ समय के बाद गुरु साहिब ने कहा कि सिर दिये बिना इस निशाने में सफलता नहीं मिलेगी ।

८ जुलाई १६७५ के दिन गुरु तेग़ बहादर साहिब ने (गुरु) गोबिन्द सिंघ साहिब को गुरगद्दी देने की रस्म की और कहा कि मैं कश्मीरी पंडितों की प्रार्थना लेकर औरंगज़ेब से दिल्ली जा कर भेंट करूँगा । इस के दो दिन बाद आप चक्क नानकी से दिल्ली के लिये चल पड़े । आप के साथ भाई मती दास, भाई सती दास और भाई दियाल दास, भाई ऊदा और भाई गुरदित्ता भी थे । भाई ऊदा और भाई गुरदित्ता सीधे दिल्ली चले गये और अन्य तीनों गुरु साहिब के साथ रहे । चक्क नानकी में गुरु साहिब का

यह अंतिम दिन था । बाद में ११ नवम्बर १६७५ के दिन आप को दिल्ली में शहीद कर दिया गया । गुरु साहिब के धड़ का दाह-संस्कार भाई लख्खी राये यादव (बनजारा) ने अपने घर को आग लगा कर किया। गुरु तेग़ बहादर साहिब का सीस भाई जैता (जीवन सिंघ), भाई नानू और भाई ऊदा दिल्ली से ले कर १६ नवम्बर १६७५ के दिन कीरतपुर पहुँचे और दूसरे दिन आप के सीस का दाह-संस्कार चक्क नानकी में किया गया । जिस जगह गुरु साहिब के सीस का दाह-संस्कार किया गया वहाँ गुरुद्वारा "सीस गंज" बना हुआ है ।

गुरु तेग़ बहादर साहिब की शहीदी के बाद :

गुरु तेग़ बहादर साहिब की शहीदी के बाद गुरु गोबिन्द सिंघ साहिब ने सिक्ख पंथ की बागडोर सम्भाली । गुरु तेग़ बहादुर साहिब की शहीदी ने सिक्खों में बड़ा रोश पैदा किया किंतु गुरु गोबिन्द सिंघ साहिब ने उन को इस का जवाब तुरन्त देने से रोका । इस से पहले गुरु जी सिक्ख सेना को पूरी तरह तैयार करना चाहते थे । गुरु साहिब ने अलग-अलग इलाकों में सिक्ख धर्म के प्रचार और प्रसार को जत्थेबंध किया । इस दौरान लाहौर से भाई हरिजस सुभिक्खी ने गुरु साहिब को शादी के लिये दबाव डालना शुरू किया । वह चाहते थे कि गुरु साहिब बारात ले कर लाहौर आयें । इस कारण गुरु साहिब ने आनंदपुर साहिब से लगभग ११ किलोमीटर दूर "गुरु का लाहौर" की नींव रखी । २१ जून १६७७ के दिन गुरु गोबिन्द सिंघ साहिब का विवाह इस स्थान पर हुआ । (गुरु का लाहौर में इस से सम्बंधित गुरुद्वारे बने हुए हैं) ।

१६७८ में गुरु गोबिन्द सिंघ साहिब ने गुरु ग्रंथ साहिब का स्वरूप तैयार करवाना शुरू किया । उस समय गुरु ग्रंथ साहिब की "आदि बीड़" धीर-मल्लीयों के पास थी । धीर मल्ल १६ नवम्बर १६७७ के दिन मर चुका था और उस के बड़े पुत्र राम चंद को २४ जुलाई १६७८ के दिन औरंगजेब ने कत्ल करवा डाला था । राम चंद के बाद उस का छोटा भाई भार मल्ल धीर मल्ल का वारिस बना । अगस्त १६७८ में राम चंद की अंतिम रस्म पर गुरु साहिब ने भाई मनी सिंघ को बकाला भेजा । रस्म पूरी होने के बाद भाई मानी सिंघ ने भार मल्ल को कहा कि गुरु साहिब गुरु ग्रंथ साहिब

नया स्वरूप तैयार करना चाहते है इस लिय वे कुछ दिनों के लिये "आदि बीड़" दे दें । भार मल्ल ने "आदि बीड़" चक्क नानकी भेजने से स्पष्ट रूप से ना कर दी और कहा कि गुरु साहिब किसी को करतारपुर भेज कर आदि बीड़ की नकल करवा लें ।

सेना की तैयारी और "रणजीत नगारा" :

अब गुरु गोबिन्द सिंघ साहिब ने प्रचार को संगठित करना शुरू कर दिया । आने वाले दिनों में पैदा होने वाली समस्याओं को सामने रखते हुए गुरु साहिब ने चक्क नानकी में सेना की तैयारी शुरू कर दी । बहुत से नौजवान गुरु साहिब की सेवा में उपस्थित हो गये । उन को हर तरह की सैनिक शिक्षा दी गई । फरवरी में गुरु साहिब ने एक नगारा तैयार करवाना शुरू किया । मार्च १६८० के आरम्भ में यह "रणजीत नगारा" तैयार हो गया । पाँच मार्च १६८० से हर सत्संग के मौके पर यह नगारा बजाया जाने लगा । इस के साथ ही गुरु साहिब ने सिक्खों को आदेशनामे भेजे और कहा कि जो भी सिक्ख चक्क नानकी आये वह अपने साथ अच्छी किताबें, अच्छे घोड़े और शस्त्र की भेंट लेकर आये । आने वाले सालों में चक्क नानकी में अच्छी से अच्छी किताबें, अच्छे नस्ल के घोड़े और हर तरह के हथियार पहुँच चुके थे ।

त्रिपुरा के राजा का चक्क नानकी आना

जब १६६८ के शुरूआत में गुरु तेग़ बहादुर साहिब राजा राम सिंह के साथ आसाम गये तो वहाँ त्रिपुरा और जैंतीया का राजा राम सिंह भी गुरु साहिब को मिला । उस की शादी को काफी साल बीत चुके थे परन्तु उस के घर कोई संतान नहीं हुई थी । उस ने गुरु साहिब से आशीर्वाद मांगा । गुरु साहिब ने उस को कहा कि वह सच्चे दिल से वाहिगुरु के सामने अरदास करे तो उस की इच्छा ज़रूर पूरी होगी । साल के आख़िर में राजा राम सिंह के घर बेटा पैदा हुआ । उस ने उस का नाम रतन राये रखा । १६८० में राजा राम सिंह की मौत हो गई । अब त्रिपुरा की गद्दी पर रतन राय (उस का नाम रतन मनीकया भी लिखा मिलता है) बैठा । राजा रतन राये की माँ ने उस को सिक्ख धर्म की शिक्षा दी । एक दिन रतन राये ने अपनी माँ को कहा कि जिस गुरु साहिब के आर्शीवाद से

उस का जन्म हुआ था वह उनके दर्शन करना चाहते हैं । उस की माँ ने उस को बताया कि गुरु साहिब तो १६७५ में शहीद कर दिये गये थे। जब रतन राये को गुरु साहिब की शहीदी का पता लगा तो वह फूट-फूट कर रो पड़ा । उस की माँ ने उस को दिलासा दिया और कहा कि भले ही नौवें गुरु शारीरिक रूप में उपस्थित नहीं हैं किंतु उन की आत्मा उन के बेटे दशम नानक में प्रकाश करती है । इस पर राजा रतन राये ने अपनी माँ को कहा कि वह गुरु साहिब के दर्शन करना चाहते हैं।

रतन राये ने चक्क नानकी आने की तैयारी शुरू कर दी । उस १२ साल के बालक ने कुछ उपहार ले जाने के बारे में सोचा । इन उपहारों में एक हाथी भी था । यह हाथी कोयले जैसा काले रंग का था और इस के सर से पूँछ तक एक सफेद धारी थी । रतन राये ने एक पंच-कला हथियार भी तैयार करवाया । इस का काँटा (अँकुड़ी) घुमाने पर यह पिस्तौल, गुरज, बरछी, तलवार और भाला बन जाता था । रतन राये ने एक चंदन की चार पुतलियों वाली चौकी, सोने का चित्रदार कटोरा, जिगह, कलगी, मोतियों की खूबसूरत माला भी तैयार करवाई । यह सभी चीजें इकट्ठी करने के साथ-साथ रतन राये ने परसादी हाथी को कई तरह का प्रशिक्षण भी दिया ।

राजा रतन राये अपनी माँ और कुछ दरबारियों को ले कर १२ अक्तूबर १६८० के दिन चक्क नानकी पहुँचे । वह गुरु गोबिन्द सिंघ साहिब के दर्शन कर के बहुत खुश हुये । उस समय रतन राये १२ साल के थे । रतन राये ने अपने उपहार गुरु साहिब को भेंट किये । जब वह हाथी को पास लाये तो हाथी ने अपनी सूंड के साथ पात्र उठा कर गुरु साहिब के पैर धोये । फिर तौलिये के साथ गुरु साहिब के पैर साफ किये और उन के जूते सीधे कर के रखे । इस के बाद हाथी ने उपनी सूंड़ के साथ गुरु साहिब के सिर पर चौर और पंखा झुलाया । जब गुरु साहिब ने एक तीर चलाया तो हाथी उस तीर को उठा लाया । शाम के समय हाथी ने अपनी सूंड के साथ जल्ती मशाल पकड़ कर गुरु साहिब को राह दिखाई और अन्य अनेक कौशल (करतब) दिखाये । रतन राये ने पंचकला शस्त्र भी गुरु साहिब को चला कर दिखाया ।

राजा रतन राये ने गुरु साहिब से सिक्खी का दान माँगा । रतन राये चक्क नानकी में इतना खुश था कि उस का वापिस लौटने का दिल नहीं करता था । आखिर पाँच महीने बीत जाने के बाद गुरु साहिब ने उसको कहा कि वह वापिस त्रिपुरा जाकर अपनी रियासत का कार्यभार सम्भाले । जाने से पहले गुरु साहिब ने उस को कई कीमती उपहार दिये ।

चक्क नानकी में कवि और विद्वान

गुरु गोबिन्द सिंघ साहिब ने जहाँ एक तरह अच्छी सेना, अच्छे घोड़े, अच्छे हथियार इकट्ठे कर लिये थे और "रणजीत नगारा" बजाना शुरू कर दिया था वहीं दूसरी ओर चक्क नानकी को विद्वानों, शायरों और कलाकारों का केन्द्र भी बना लिया था। गुरु साहिब के दरबार में अमृत राये और भाई नंद लाल जैसे कमाल के शायर भी आ चुके थे । भाई नंद लाल चक्क नानकी में मार्च १६८२ में आये थे । इस के बाद और भी दर्जनों शायर और कलाकार गुरु साहिब के दरबार में शामिल हुए थे । करीब तीन साल चक्क नानकी में सैनिक कार्यवाही और कवि दरबार साथ-साथ चलते रहे। गुरु साहिब के पास ५२ कवि और अन्य कलाकार उपस्थित थे । इस दौरान ३ मार्च १६८३ के दिन गुरु साहिब ने चक्क नानकी में होला-महल्ला मनाया। इस मौके पर घुड़ दौड़, कुश्ती, गतका और बनावटी लड़ाईयों के मुकाबले कराये गये । इस रस्म को होली के दूसरे दिन शुरू करने का मकसद एक ओर तो सिक्खों को होली में रंग डालने की बेमतलब रस्म से हटाना था और दूसरी ओर शारीरिक और सैनिक पक्ष से मज़बूत करना भी था ।

पाउंटा साहिब की नींव रखना :

१६८५ के शुरू में माहन के राजा मेदनी प्रकाश ने गुरु साहिब को अपनी रिआसत में दर्शन देने की प्रार्थना की । १४ अप्रैल १६८५ के दिन गुरु साहिब नाहन पहुँचे । नाहन के राजा ने गुरु साहिब का हार्दिक स्वागत किया । गुरु साहिब कुछ दिन नाहन के राजा के महल में ठहरे और इलाके की संगतों को खुश किया । इस दौरान राजा ने गुरु साहिब से प्रार्थना की कि वह उस की रियासत में निवास रखें । गुरु साहिब ने उसकी भावुकता देखते हुए रियासत की यात्रा की और यमुना नदी के किनारे मौजूदा पाऊंटा

साहिब वाली जगह पर नया नगर बसाने का फ़ैसला किया। पाऊंटा साहिब की नींव गुरु साहिब ने २९ अप्रैल १६८५ के दिन दीवान नंद चंद से अरदास करवा कर भाई राम कुंवर (अमृत पान के बाद भाई गुरबख़्श सिंघ) के हाथों रखवाई। गुरु साहिब अगले तीन साल छे महीने पाऊंटा साहिब में ठहरे। यहाँ रहते १८ सितम्बर १६८८ के दिन गुरु साहिब को भंगाणी में गढ़वाल के राजा फ़तह शाह की सेना के साथ लड़ाई भी करनी पड़ी।

चक्क नानकी की ओर वापिसी :

उधर बिलासपुर की रानी चम्पा ने कई बार पत्र लिख कर गुरु साहिब को प्रार्थना की थी कि वह उस की रियासत की शोभा बढ़ायें। इस कारण भंगाणी की लड़ाई जीतने के बाद गुरु साहिब ने चक्क नानकी जाने का फ़ैसला कर लिया। नाहन के राजा ने बड़ी कोशिश की कि गुरु जी नाहन रियासत से न जायें। पर आप ने उस को दिलासा दिया और चक्क नानकी जाने की तैयारी शुरू कर दी। आप २८ अक्तूबर १६८८ के दिन पाऊंटा साहिब से चले और कपाल मोचन, लाहड़पुर, टोका, दाबरा, रानी का रायपुर, मनी माजरा, नाढा, ढकौली, कोटला निहंग, रोपड़, धनौला, बुंगा, अटारी, कीरतपुर होते हुए चक्क नानकी पहुँच गये। आप के आने से चक्क नानकी में फिर रौनक शुरू हो गई। रानी चम्पा को जब गुरु साहिब का नाहन रियासत से चक्क नानकी आने का पता लगा तो वह बहुत खुश हुई। वह कई सालों से गुरु साहिब के दर्शनों की आशा लगाये बैठी थी। उम्र से भी वह बड़ी वृध हो चुकी थी। जैसे ही उस को गुरु साहिब के आने का पता लगा उस ने अपना मंत्री भेज कर गुरु साहिब को बिलासपुर आने की प्रार्थना की। पत्र मिलते ही दूसरे दिन ही गुरु साहिब ने बिलासपुर जाने की तैयारी शुरु कर दी। जब गुरु जी नगर के समीप पहुँचे तो किसी ने रानी चंपा को जा कर बता दिया। रानी अपने पुत्र राजा भीमचंद को ले कर गुरु साहिब के स्वागत के लिए नगर के मुख्य द्वार तक पहुँची। पाँच दिन गुरु साहिब बिलासपुर रहे और फिर चक्क नानकी लौटे।

अनंदपुर साहिब का इतिहास :

२९ मार्च १६८९ के दिन रानी चम्पा अपने पुत्र भीमचंद को लेकर चक्क नानकी पहुँची। चक्क नानकी में बहुत रौनक हुई। रानी चम्पा ने

गुरु साहिब से प्रार्थना की कि वह फिर उस से दूर न जायें और यदि गुरु साहिब को लगता है कि चक्क नानकी की भूमि थोड़ी है तो गुरु साहिब एक नया गाँव बसा लें । रानी चम्पा ने नये नगर के लिए भूमि अरदास करवाने की इच्छा भी प्रगट की और कहा कि गुरु साहिब चाहें तो अपनी रियासत की सुरक्षा के लिये किले भी तैयार करवा लें ।

उस समय (१६८९ में) चक्क नानकी की सीमा चरण गंगा नदी और मौजूदा केसगढ़ साहिब के नीचे वाले चौक के बीच थी । रानी चम्पा की इच्छा को स्वीकार करते हुये गुरु साहिब ने नया गाँव बसाना और किले बनाना मान लिया । गुरु साहिब ने रानी से अगमपुर और तारागढ़ की कुछ भूमि खरीद ली । पहले तो रानी ने कहा कि वह भूमि अरदास करवाना चाहती है और उस की कीमत नहीं लेगी । किंतु जब गुरु साहिब ने कहा कि वह सिक्ख नगर के लिये भूमि मुफ़्त नहीं लेंगे तो रानी ने स्वीकार कर लिया ।

अनंदपुर साहिब की नींव रखना :

३० मार्च १६८९ के दिन गुरु गोबिन्द सिंघ साहिब ने चक्क नानकी के नज़दीक आज के किला अनंदगढ़ वाले स्थान पर नये गाँव की नींव रखी । भाई चउपत राये (बाद में चौपा सिंघ) ने अनंद साहिब की पाँच पउड़ीयाँ पढ़ कर अरदास की । नये नगर का नाम गुरु साहिब ने 'अनंदपुर' रखा । (आजकल चक्क नानकी और अनंदपुर सभी को अनंदपुर साहिब कहा जाता है) । रानी चम्पा तीन दिन चक्क नानकी में रही ।

अनंदपुर साहिब के किले :

३१ मार्च १६८९ के दिन गुरु साहिब ने चक्क नानकी–अनंदपुर साहिब के आस–पास पाँच किले बनवाने शुरू किये । गुरु साहिब ने इन किलों के नाम अनंदगढ़ (मौजूदा अनंदगढ़ किला), लोहगढ़ (मौजूदा लोहगढ़ गुरुद्वारा वाला स्थान), तारागढ़ (कोट कहिलूर के नज़दीक मौजूदा गुरुद्वारा तारागढ़ की जगह), अगमगढ़ (गाँव अगमगढ़, माता जीत कौर जी के गुरुद्वारे के नज़दीक । इस जगह आजकल गुरुद्वारा लोहगढ़ बना हुआ है) और फतहगढ़ (चरणगंगा के नज़दीक । गुरुद्वारा सीसगंज के पीछे क़ी ओर) रखे । सब से पहले किला अनंदगढ़ तैयार हुआ । यह किले १६८९–९०

में तैयार हो गये । इस में फतहगढ़ और तारागढ़ किले पहाड़ी राजाओं के आक्रमणों को रोकने के लिये और लोहगढ़ (जिस का दरवाज़ा बड़ा मज़बूत था) और अगमगढ़ मौजूदा होशियारपुर और ऊना जिलों की ओर से मुग़ल सैनिकों को रोकने के लिये बनाये गये थे । किला अनंदगढ़ जो सब से सुरक्षित था, दोनों की ओर की सेना को रोकने के लिये था । पहाड़, नदी सतलुज और चरणगंगा की प्राकृतिक सुरक्षा होने के बाद भी, गुरु साहिब ने चारों ओर से सैनिक सुरक्षा के लिये पूरे प्रबन्ध कर लिये थे । इन पाँच किलों के अतिरिक्त गुरु साहिब ने १६९९ में किला केसगढ़ साहिब भी बनवाया था । किला तारागढ़ और लोहगढ़ का मोर्चा टूट जाने की सूरत में किला केसगढ़ साहिब, किला लोहगढ़ साहिब, किला फ़तहगढ़, किला आनंदगढ़ चक्क नानकी अनंदपुर साहिब के लिये पूरी सुरक्षा प्रदान करते थे । इस तरह गुरु साहिब ने चक्क नानकी-अनंदपुर साहिब को दुश्मनों के हमलों से पूरी तरह सुरक्षित कर लिया था । दुश्मन भले ही सालों साल कोशिश करते रहते किन्तु गुरु की नगरी में प्रवेश नहीं कर सकते थे । सिर्फ एक समस्या थी जिस से कुछ मुश्किल खड़ी हो सकती थी : वह समस्या थी महीनों घेरा लगे रहने पर अनाज की समस्या । इस समस्या के अतिरिक्त गुरु की नगरी एक पूरी सम्पूर्ण सुरक्षित राजधानी थी ।

नदौण की लड़ाई :

१६९० में बिलासपुर का राजा भीमचंद था । वह गुरु गोबिन्द सिंघ साहिब का पूरी तरह वफ़ादार था । किन्तु उस का पुत्र अजमेर चंद अपने मंत्री पंडित परमानन्द के प्रभाव के अधीन अधिक था और पंडित परमानन्द सिक्ख धर्म से घृणा करता था । उस की सिक्ख-घृणा धीरे-धीरे अजमेर चंद की आत्मा में समाती गई । जब तक भीमचंद और रानी चम्पा जीवित रहे, बिलासपुर रियासत गुरु साहिब की पूरी तरह वफ़ादार रही । गुरु साहिब ने भी हर समय बिलासपुर रियासत और अन्य पहाड़ी राजाओं की पूरी प्रतिपालना की ।

मार्च १६९० में लाहौर के गर्वनर की ओर से अलफ़ खान के नेतृत्व में भेजी गई सेना ने पहाड़ी राजाओं पर आक्रमण कर दिया । लाहौर की सेना कांगड़े की ओर बढ़ रही थी । इस अवसर पर पहाड़ी राजाओं ने

राजा भीम चंद के द्वारा आक्रमण के विरुद्ध सहायता माँगी । गुरु साहिब ने दीवान नंद चंद, धर्म चंद (सिंघ) छिब्बर, भाई मनी राम (सिंघ), भाई आलम चंद (सिंघ) 'नच्चणा' और अन्य सेनापतियों के नेतृत्व में सेना को नदौण की ओर कूच करने का आदेश दिया । अनंदगढ़ से चलकर सिक्ख सेना का दल नदौण जा पहुँचा । २० मार्च १६९० के दिन बड़ी भयानक लड़ाई हुई । अलफ़ खान की सेना के सब से अधिक शक्तिशाली दल के साथ सिक्ख सैनिक जम कर लड़े । दोनों ओर से शूरवीरों ने खूब जौहर दिखाये । धर्म चंद, मनी राम, मूलचंद कंबोज, सोहन चंद परमार जैसे सेनापतियों के तीरों की बौछार ने अलफ़ खान की सेना के आक्रमण तोड़ डाले । सूरज के छिप जाने के बाद अलफ़ खान की सेना पीछे की ओर भागनी शुरू हो गई । पहाड़ी सेना और सिक्ख सैनिकों ने अलफ़ खान की भागी जा रही सेना का दूर तक पीछा किया । नदौण की लड़ाई में दोनों ओर से काफ़ी नुक्सान हुआ । सिक्ख सेनापतियों में भाई सोहन चंद (भाई मनी सिंघ के भाई), भाई मूल चंद (पुत्र रघुपति राय निझर) और कुछ अन्य सिक्ख शहीद हुये । दूसरे दिन उन का संस्कार किया गया । गुरु साहिब सात दिन नदौण के राजमहल में रहे और आठवें दिन अनंदपुर साहिब की ओर चल पड़े । रास्ते में अलसून गाँव (यह गाँव कहा हैं इस सम्बंध में पूरा पता नहीं चलता) के रंघड़ों ने सिक्ख सैनिकों को तंग किया और उन का मज़ाक उड़ाया । अनंदपुर साहिब लौटने से पहले सिक्ख सैनिकों ने इन गुण्डों की अच्छी मुरम्मत की ।

रानी चम्पा की मौत :

१२ मई १६९१ के दिन बिलासपुर की महारानी चम्पा का देहांत हो गया । रानी चम्पा का गुरु साहिब के साथ बहुत प्यार था । रानी की सत्तारवीं २४ मई के दिन थी । गुरु गोबिन्द सिंघ साहिब अपनी दादी (माता नानकी), परिवार और मुख्य सिक्खों को साथ ले कर बिलासपुर गये । गुरु साहिब वहाँ तीन दिन रहे और अन्तिम रस्म के बाद अनंदपुर साहिब लौट आये । इस समय तक अनंदपुर साहिब में काफ़ी मकान बन चुके थे और किले भी पूरी तरह तैयार हो चुके थे । अब गुरु साहिब अधिक समय यहाँ ही रहने लगे और संगतों को दर्शन देने लगे ।

पहाड़ी राजाओं का सम्मेलन :

मार्च १६९२ में राजा भीमचंद ने पहाड़ी राजाओं का सम्मेलन बुलाया। नदौण की लड़ाई के बाद मुग़ल सरकार द्वारा होने वाले आक्रमणों के डर में रहने वाले पहाड़ी राजाओं ने गुरु साहिब के नेतृत्व की इच्छा प्रगट की। मार्च १६९२ के अन्तिम सप्ताह गुरु साहिब बिलासपुर की ओर गये। २९ मार्च १६९२ के दिन रवालसर में पहाड़ी राजा इकट्ठे हुए। उन का नेतृत्व गुरु साहिब ने किया। गुरु साहिब ने उन को विश्वास दिलाया कि यदि वे मुग़लों की गुलामी में न रहना चाहे तो वह (गुरु साहिब) उन की निगाहबानी और नेतृत्व करने के लिये तैयार हैं। सभी राजाओं ने गुरु साहिब के आदेश को मानने का वायदा किया। गुरु साहिब कुछ दिन रवालसर रहे और फिर पुरमंडल, जम्मू, चक्क कान्हा, रामगढ़, खिरड़ी, सांबा, पठानकोट, होशियारपुर में दर्शनार्थियों को दर्शन देते हुए अनंदपुर साहिब आ गये। गुरु साहिब के आने पता लगने पर दर्शन करने वालों के दल फिर अनंदपुर साहिब की ओर आने शुरु हो गये।

१६ सितम्बर १६९२ के दिन बिलासपुर के राजा भीमचंद का देहांत हो गया। उस की अन्तिम रस्म २ अक्तूबर १६९२ के दिन थी। भीमचंद की सत्तारवीं की रस्म में गुरु साहिब अपनी दादी (माता नानकी), अपने परिवार भाई चउपति राये और मुख्य सिक्खों को ले कर अनंदपुर साहिब से बिलासपुर गये।

भीमचंद की मौत के बाद अजमेरचंद अब पूरी तरह पंडित परमानंद के प्रभाव अधीन हो गया। इस के साथ ही बिलासपुर रियासत और सिक्खों के सम्बंधों में दरार पड़नी शुरू हो गई।

अप्रैल १६९३ में गुरु साहिब अनंदपुर साहिब से तलवंडी साबो और लख्खी जंगल के इलाके की यात्रा पर गये। राये डल्ला ने गुरु साहिब का हार्दिक स्वागत किया। कुछ दिन तलवंडी साबो रहने के बाद गुरु साहिब धमतान गये। धमतान में कुछ दिन रहने के बाद गुरु साहिब बांगर देश की यात्रा पर निकल गये। इस तरह छः महीने यात्रा में रहने कें बाद आप फिर अनंदपुर साहिब आ गये। तीन महीने अनंदपुर साहिब में व्यतीत कर के गुरु साहिब देहरादून, हरिद्वार, कुरुक्षेत्र की यात्रा पर चले गये। डेढ

महीना इस इलाके में प्रचार करने के बाद आप फिर अनंदपुर साहिब आ गये। पहली वैसाख (२९ मार्च १६९४) के दिन हर ओर से दर्शन करने वालों के बड़े दल अनंदपुर साहिब पहुँचे। ३ मई १६९४ के दिन भाई निहंग खान के पुत्र आलम की राये कल्हा की बेटी के साथ सगाई में शामिल होने के लिये गुरु साहिब कोट निहंग (रोपड़) पहुँचे। ११ जुलाई १६९४ के दिन गुरु साहिब के नाना भाई लाल चंद का अचानक देहांत हो गया। इस मौके पर गुरु साहिब को लखनौर जाना पड़ा। १० फरवरी १६९५ के दिन दीवान दरगाह मल्ल (जो सातवें से दसवें गुरु साहिब तक के समय में दीवान रहे थे) का अनंदपुर साहिब में देहांत हो गया। (गुरु साहिब ने १६७६ में उनकी इच्छा को ध्यान में रखते हुये उन के बेटे भाई धर्म चंद को दीवान बना दिया था)। उन का संस्कार अंगमपुरा में किया गया।

सिक्खों को केशधारी होने का आदेशनामा :

२९ मार्च १६८५ (पहली वैसाख) के दिन अनंदपुर साहिब में दर्शनार्थियों का एक भारी सम्मेलन हुआ। अनंदपुर साहिब में ऐसा बड़ा सम्मेलन कम ही हुआ था। इस सम्मेलन में गुरु साहिब ने हुक्मनामा जारी किया कि कोई भी सिक्ख अपने केश नहीं काटेगा। मृत्यु के अवसर पर विलाप नहीं करेगा, बच्चे के केश जन्म से ही रखेगा और दायें हाथ में कड़ा पहनेगा।

अनंदपुर साहिब पर पहला आक्रमण :

अगस्त १६९५ में लाहौर के गर्वनर दिलावर ख़ान ने पहाड़ी राजाओं को सबक सिखाने के लिये पहाड़ों की ओर कूच करने के लिये अपने पुत्र रुसतम ख़ान को सेना देकर भेजा। दिलावर ख़ान को मालूम था कि पहाड़ी राजा गुरु गोबिन्द सिंघ साहिब की सहायता से ही जीत सकते हैं। इस कारण उसने अपने पुत्र को पहला हमला अनंदपुर साहिब पर ही करने का सुझाव दिया। १९ अगस्त १६९५ के दिन रुसतम ख़ान की सेना अनंदपुर साहिब के नाले के किनारे आ गई। बरसात के कारण उन दिनों नाले में बाढ़ आई हुई थी। उधर भाई आलम चंद 'नच्चणा' ने गुरु साहिब को मुग़ल सेना के आने की ख़बर दे दी। रणजीत नगारे पर चोट लगाते ही सिक्ख सेना उसी वक्त नाले के दूसरे किनारे आ डटी। नाले में बाढ़ के कारण रुसतम ख़ान के किसी सैनिक का साहस नहीं हुआ कि वह नाला

पार कर के अनंदपुर साहिब में प्रवेश कर सके। दूसरा, किला अनंदगढ़ में नगारे की ध्वनि से भी मुग़लों में डर फैल गया था। रुसतम ख़ान की सेना हमला किये बिना ही वापिस लौट गई। मुग़ल सेना के जाने के बाद सिक्खों ने इस नाले का नाम "हिमायती नाला" रखा। अब इस नाले का नामोनिशान नहीं रहा और इस भूमि पर खेती होती है।

बिलासपुर और अनंदपुर साहिब अलग हुये :

जब रुसतम खान अनंदपुर साहिब से खाली हाथ लौटा तो लाहौर के गर्वनर दिलावर खान ने कांगड़े के किलेदार हुसैन खान को भेजा। हुसैन खान ने अनंदपुर साहिब की तरह मुँह करने के स्थान पर सीधे पहाड़ी राजाओं पर चढ़ाई कर दी। डढवालीये और बिलासपुरीये राजाओं ने पहले तो हुसैनी से टक्कर ली पर अंत में हथियार डाल दिये। हुसैन खान ने उनको इस शर्त पर माफ़ कर दिया कि वह अपनी सेना सहित उसकी सेना में शामिल होकर अन्य पहाड़ी राजाओं पर आक्रमण करेंगे। इस चढ़ाई के दौरान मुग़ल सेना ने गुलेर रियासत पर भी आक्रमण किया। गुलेर के राजा गोपाल ने समझौता करने की कोशिश की किन्तु हुसैनी ने पूरे का पूरा म़ामला लेने की शर्त रखी। आख़िर राजा गोपाल ने गुरु साहिब की सहायता माँगी। गुरु साहिब ने भाई बचित्र दास, भाई संगत राये, भाई हनूमंत राये, भाई लहिनू आदि के नेतृत्व में सिक्ख सैनिकों को राजा गोपाल की सहायता के लिये भेजा। इस लड़ाई में सिक्ख सेनापतियों के तीरों की बौछार ने मुग़लों और उन से हार कर गुलामी स्वीकार करने वाले पहाड़ी राजाओं की सेना के छक्के छुड़ा दिये। कांगड़े का किलेदार हुसैन खान और उसके कई पहाड़ी साथी मारे गये। सिक्खों में भी भाई लहिनू, भाई संगत, भाई हनूमंत, भाई दरसो और तीन अन्य सिख भी शहीद हो गये। इस लड़ाई में अजमेर चंद मुग़ल सेनापति का गुलाम बन कर लड़ा था। इस लड़ाई के बाद वह मुग़लों की कठपुतली बन गया और उन के कैंप में शामिल होकर अन्य पहाड़ी राजाओं के साथ-साथ सिक्खों का भी दुश्मन बन गया। इस के बाद बिलासपुर और अनंदपुर साहिब में मैत्री सम्बंध समाप्त हो गये और अजमेर चंद ने सिक्खों के विरुद्ध षड़यन्त्र करने शुरू कर दिये।

अनंदपुर साहिब और नये हमलों की तैयारी :

गुलेर में मुग़ल सेना की हार के बाद लाहौर को गर्वनर ने पहाड़ी राजाओं को हराने के लिये जुझार सिंह हाडे को तीन हजार सैनिक दे कर भेजा। जुझार सिंह हाडा एक हठी और ताकतवर सेनापति था। उस ने देर तक मुकाबला किया किन्तु मारा गया। गर्वनर लाहौर इस पर और भी क्रोधित हुआ। जब इस की सूचना औरंगज़ेब के पास पहुँची तो उस ने अपने पुत्र शहज़ादा मुअज्ज़म को लाहौर के सूबेदार की सहायता के लिये भेजा। शहज़ादा मुअज्ज़म सेना ले कर आगरे से लाहौर की ओर चल पड़ा। सिक्ख जासूसों ने गुरु साहिब को शाही सेना के आने का समाचार दिया। गुरु साहिब ने कहा कि अकाल पुरख का आदेश इस सेना का अनंदपुर साहिब पर आक्रमण नहीं होने देगा। शहज़ादा मुअज्ज़म ने सिक्ख सैनिकों के साथ लड़ाई नहीं की और चला गया। उस ने वापिस जा कर औरंगजेब को ख़बर की कि पंजाब देश में कोई समस्या नहीं और अनंदपुर साहिब पर हमला करना मुग़ल सरकार के हित में नहीं।

औरंगजेब ने तस्सली करने के लिये सितम्बर १६९६ के आखिर में मिरज़ा बेग़ को भेजा। मिरज़ा बेग़ अनंदपुर साहिब आया और उस ने सिक्खों के साथ मुलाकात की। मिरज़ा बेग़ को अनंदपुर साहिब के साथ टक्कर लेने का कोई पक्ष नज़र नहीं आया। उस ने इसकी रिपोर्ट औरंगजेब को भेज दी। इस पर भी दिल्ली दरबार ने चार और कर्मचारी पहाड़ों की ओर भेजे। उन्हों ने भी मिरज़ा बेग़ की रिपोर्ट पर सहमति दी। इस से एक बार तो अनंदपुर साहिब किसी बड़े आक्रमण से बच गया।

✲ ✲ ✲

खालसा प्रगट करना

"खालसा अकाल पुरख की फौज ।
प्रगटिओ खालसा परमातम की मौज ।।"

दसवें नानक पातिशाह गुरु गोबिन्द सिंघ साहिब ने आज से तीन सौ साल पहले अकाल पुरख के आदेश से खालसा को प्रगट किया । जिस समय गुरु साहिब ने खालसा प्रगट करते समय सीस भेंट कौतुक रचा उस से पहले सिक्ख पंथ का दलबंधक ढांचा जो गुरु नानक साहिब के समय 'धर्मशाला' और 'संगत' के रूप में शुरु हुआ था और गुरु अमरदास साहिब के समय 'मंजियों' और 'पीड़ियों' के रूप में फैला, वह गुरु रामदास साहिब के समय 'मसंद' श्रेणी बन कर कायम हो गया था । मसंद श्रेणी के कायम होने से सिक्ख पंथ, सिक्ख धर्म और सिक्ख कौम एक व्यवस्थित संगठित ढाँचे में बंध गयी थी । सिक्ख धर्म का प्रचार और आर्थिक प्रबन्ध एक साथ काम करने लगे । संगतों का दसवंध सही ढंग से गुरु दरबार में पहुँचने लगा और इस ख़ज़ाने से लोक भलाई के काम और ज़रूरतमंद लोगों की पूरी सहायता होने लगी । चौथे नानक से नौवें नानक तक इस मसंद श्रेणी ने बहुत उत्कृष्ट काम किया । दसवें नानक के समय भी इस श्रेणी का कार्य काफ़ी हद तक ठीक था पर जैसे-जैसे असल मसंदों के स्थान पर उन के उत्तराधिकारी, विशेष कर के उन की संतान आनी शुरू हुई इस श्रेणी में खराबी आनी शुरू हो गई । मसंदों में बईमानी और कुछ हद तक मुजरमाना सोच आनी शुरू हो गई ।

मसंदों को सज़ा :

८ फरवरी से १४ फरवरी १६९८ तक सिक्खों के कई दल अनंदपुर साहिब आते रहे । इस मौके पर धार्मिक आयोजनों के साथ-साथ खेलें: कुश्ती, गतका, घुड़सवारी, भाला बाज़ी और तलवार चलाने के मुकाबले

भी होते रहे । बीच में कुछ अवसरों पर भांड भी अपनी कला दिखाते रहते थे । इन दिनों में ही, एक अवसर पर, भांडों ने मसंदों की नकल की । उन्हों ने मसंदों को लुटेरे, ठग, घमंडी, बेईमान, बदचलन और अय्याश जैसा दिखाया । उस समय गुरु साहिब के पास भाई नानूं राम दिलवाली (दीवान दरबारा सिंघ जत्थेदार का पिता) बैठा था । उस ने गुरु साहिब को मसंदो के सम्बंध में और जानकारी भी दी । यह सब सुन कर गुरु साहिब के रोंगटे खड़े हो गये । गुरु साहिब ने दीवान मनी राम (भाई मनी सिंघ) को आदेश दिया कि सभी मसंदों को बांध कर अनंदपुर साहिब लाया जाये । भाई आलम चंद (सिंघ) 'नच्चणा' के साथ चार और सिक्ख भी भेजे गये कि वह मसंदों को अनंदपुर साहिब हाज़िर करे । कुछ दिनों में सभी मसंद अनंदपुर साहिब पहुँच गये । गुरु साहिब ने मसंदों की परख की । जो मसंद बेईमान निकले, उन को कठोर सज़ा दी गई । बड़े मुजरिमों को सज़ाये-मौत सुनाई गई । इस सज़ा पर कार्यवाही भी वहीं की गई । कुछ मसंद, जो परीक्षा से सफल हो कर निकले, उन को सिरोपा भेंट किये गये । इन में भाई बखत मल्ल सूरी (जलालपुर जट्टाँ), भाई राओ कंबो (दीपालपुर), भाई जोध (कमालीया), भाई दुरगा दास हजावत (दुबुरजी, सिआलकोट), भाई तुलसी दास छींबा (दिलवाली, दिल्ली) और भाई संगत/फेरु (मीआं की मौड़, लाहौर) थे । इस के साथ ही गुरु साहिब ने मसंद श्रेणी खत्म करने का ऐलान किया । गुरु साहिब ने आदेशनामा जारी किया कि आगे से कोई सिक्ख अपना दसवंध भेटा मसंदों को न दे और सीधे गुरु दरबार को भेजे । मसंदों द्वारा आई भेंट स्वीकार नहीं की जायेगी । गुरु साहिब ने गुरु और सिक्ख के बीच मध्यस्थ समाप्त कर दिये और सिक्ख संगतों को अकाल पुरख का कृपापात्र बनाने का कौतुक रचाने की तैयारी शुरू कर दी ।

पाँच सिरों की माँग :

मार्च के आरम्भ में गुरु साहिब ने सभी सिक्खों को आदेशनामा भेज कर विक्रमी संवत् की वैसाख की पहली तारीख (२९ मार्च) के दिन अनंदपुर साहिब पहुँचने के लिए कहा । हज़ारों सिक्ख गुरु की नगरी में पहुँचे । उस दिन सुबह रबाबियों (संगीतकारों) ने कीर्तन किया । कीर्तन के बाद

भाई मनी राम (सिंघ) ने एक शब्द की कथा की । इस के साथ ही गुरु साहिब खड़े हो गये, मयान में से अपनी श्री साहिब निकाल ली और कहा: "मुझे किसी सिक्ख का सर चाहिये" । गुरु साहिब के शब्द सुन कर सभी ओर चुप्पी छा गई । गुरु साहिब ने तीन बार यही शब्द कहे । तीसरी बार के बाद भाई दया राम खड़ा हो गया । गुरु साहिब तख़्त से उतरे और उस को उस के बायें बाज़ू से पकड़ कर पास ही लगे हुये तम्बू में ले गये । कुछ समय के पश्चात् गुरु साहिब ख़ून के साथ भरी तलवार ले कर बाहर आये । इस बार गुरु साहिब ने फिर एक सर की मांग की । यह कौतुक गुरु साहिब ने पाँच बार दोहराया । पाँचवें सिक्ख द्वारा सर भेंट करने के कुछ समय पश्चात् गुरु साहिब उन पाँचों को नीले वस्त्रों में पंडाल में लेकर आये । गुरु साहिब स्वंय भी नीले वस्त्र पहने हुये थे । सर भेंट करने वाले पाँचों सिक्खों (भाई दया राम, भाई मुहकम चंद, भाई साहिब चंद, भाई धरम चंद, भाई हिम्मत चंद) के चेहरे पर अलग ही तरह का नूर झलक रहा था । गुरु साहिब ने संगतों के सम्मुख होकर कहा कि अब से इन पाँचों मृतजीवितों को "पाँच प्यारे" कहा जायेगा । जब तक चाँद सूरज कायम रहेंगे, गुरु को सिर भेंट करने वाले पहले पाँच सिक्खों का नाम दुनिया भर में कायम रहेगा । जब भी कड़ाह प्रसाद की देग तैयार हुआ करेगी इन का हिस्सा सब से पहले निकाला जाया करेगा । इस के बाद गुरु साहिब ने भाई चउपति राये को कहा कि वह चरण अमृत वाले मटके के पानी को सतलुज में प्रवाह कर आये और वहाँ से साफ पानी भर कर ले आये । गुरु साहिब ने दीवान धरम चंद छिबर को पत्थर का कुंडा (कुटनी) और लोहे का बाटा (बड़ा पात्र) और खंडा लाने के लिये कहा । गुरु साहिब ने पत्थर के कुंडे पर लोहे का बाटा रख कर उस में सतलुज नदी से मंगाया पानी डाल कर अमृत तैयार करना शुरू किया । पाँचों प्यारे गुरु साहिब के पास बैठ गये । गुरु साहिब अपने हाथ से खंडा चला कर अमृत तैयार करने लगे । गुरु साहिब ने सब से पहले जपुजी साहिब का पाठ किया । इस अवसर पर माता जीतो (जीत कौर) ने आ कर पात्र में पतासे डाले । गुरु साहिब ने पाठ करना जारी रखा । जपुजी साहिब के बाद जापु साहिब, सवैया, चौपई और अनंद साहिब का पाठ किया । इस के बाद अरदास

की और जयकार के बाद "खंडे का अमृत" देने की रस्म शुरू की ।

पाँचों प्यारों को अमृत पिला कर गुरु साहिब ने उन को नया नाम "सिंघ" दिया । पहले गुरु साहिब ने अपना नाम "गोबिन्द सिंघ" रखा फिर पाँच प्यारों को दया सिंघ, मुहकम सिंघ, साहिब सिंघ, धरम सिंघ, हिम्मत सिंघ के नाम दिये । इस के बाद आप ने उन को रहित-मर्यादा बताई । गुरु साहिब ने कहा था कि अब तुम्हारा पूर्व जन्म, धर्म, कर्म, भ्रम और शर्म पाँचों समाप्त हो गये है । अब तुम अकाल पुरख का खालसा हो । तुम 'पाँच ककारों' को हमेशा अपने साथ अंग संग रखना । चार वज्र कुरहितों से बचना (केसों की बेअदबी नहीं करना, हलाल माँस नहीं खाना, तम्बाकू का सेवन नहीं करना, पर नारी का संग नहीं राना) । वज्र कुरहित करने वाला पतित हो जायेगा और उस को फिर से खंडे का अमृत लेना पड़ेगा । मीणे, मसंद, धीरमल्लीये, रामराईये और सिरगुंम इन पाँचों के साथ सम्बंध नहीं रखना । गोर, कबर, मठ्ठ भूल कर भी नहीं मानना । तुम्हे सच्चे (परमात्मा) में मिला दिया गया है । आपस में भ्रम-भेद नहीं रखना ।

पाँच प्यारों को खंडे का अमृत देने की रस्म पूरी होने के बाद पाँच और सिक्खों को अपने आप को खंडे का अमृत लेने के लिये पेश किया । यह पाँच थे : देवा राम, राम चंद, टहिल दास, ईश्वर दास और फतहि चंद । यह पाँचों सिंघ खंडे की अमृत लेने के बाद 'पाँच मुकते' कहलाये । इन दसों के बाद भाई मनी सिंघ, उनके छः सपुत्र (भाई चितर सिंघ, बचितर सिंघ, उदय सिंघ, अनिक सिंघ, अजब सिंघ, भाई अजाइब सिंघ), भाई चौपा सिंघ, भाई धरम सिंघ (दीवान), भाई आलम सिंघ 'नच्चणा' और भाई गुरबख्श सिंघ (राम कंवर), ग्यारह सिक्खों ने खंडे का अमृत लिया । इन इक्कीस के बाद भाई राय सिंघ मुलतानी, भाई गुरबख्श सिंघ, भाई गुबख्शीश सिंघ, भाई किरपा सिंघ दत्त (किरपा राम), भाई सनमुख सिंघ दत्त (भाई किरपा राम के भाई), भाई गुरमुख सिंघ (भाई किरपा राम के पिता), भाई सुबेग सिंघ, भाई अमरीक सिंघ, भाई दया सिंघ पुरोहित, भाई बरन सिंघ, भाई अणी सिंघ, भाई लाल सिंघ पिशोरिया, भाई रूप सिंघ, सोढी दीप सिंघ, सोढी नंद सिंघ, भाई नानू सिंघ दिलवाली, सरहिंद के भाई हजारी सिंघ, भाई भंडारी सिंघ और भाई दरबारी सिंघ आदि ने 'खंडे

की पाहुल' लीया । सारा दिन 'खंडे की पाहुल' देने में व्यतीत हो गया । दूसरे दिन ३० मार्च को भी पाँच-पाँच सिंघों के दल बाहर से आये दर्शनार्थियों को 'खंडे की पाहुल' देने लगे । इस प्रकार लगातार कई दिन "खंडे की पाहुल" देने में व्यतीत हो गये ।

भाई मनी सिंघ का अमृतसर जाना :

१६३५ से १६९६ तक हरिमन्दिर साहिब 'गुरु का चक्क' (अमृतसर) का प्रबन्ध पृथ्वी चंद मीणा, उस के पुत्र मिहरबन और पौत्र हरि जी के पास रहा था । १६९६ में हरि जी की मौत के बाद उस के चारों पुत्र अमृतसर का प्रबन्ध ठीक ढंग से न कर सके । जल्दी ही वे 'गुरु का चक्क' से चले गये । धीरे-धीरे साधारण लोग भी 'गुरु का चक्क' से जाने शुरु हो गये । गुरु की नगरी की जनसंख्या कम होनी शुरु हो गई । हज़ारों सिक्खों को 'खंडे की पाहुल' देने की रस्म खत्म होने के बाद 'गुरु का चक्क' की संगत ने गुरु गोबिन्द सिंघ साहिब से प्रार्थना की कि कुछ अच्छे सिंघ 'गुरु का चक्क' की सेवा-सुरक्षा के लिये भेज दें । भाई मनी सिंघ गुरु गोबिन्द सिंघ साहिब के दीवान (मंत्री) थे । आप प्रति दिन गुरबाणी के शब्दों की कथा किया करते थे । आप यह सेवा गुरु तेग़ बहादुर साहिब के समय भी किया करते थे । गुरु साहिब ने भाई मनी सिंघ को पाँच सिंघ (भाई भूपत सिंघ, भाई गुलज़ार सिंघ, भाई कोइर सिंघ चंदरा, भाई दान सिंघ और भाई कीरत सिंघ) दे कर 'गुरु का चक्क' भेजा । भाई मनी सिंघ जी ने 'गुरु का चक्क' पहुँच कर दरबार साहिब पर निशान साहिब झुला कर पाठ और कथा की सेवा फिर शुरू की । धीरे-धीरे 'गुरु का चक्क' की रौनक बढ़ने लगी । कुछ महीनों में ही गुरु का चक्क अपनी पहली शानो-शौकत वाला नगर बन गया ।

☆ ☆ ☆

अनंदपुर साहिब पर आक्रमण

गुरु गोबिन्द सिंघ साहिब द्वारा खालसा प्रगट करने के बाद हज़ारों की संख्या में लोग सिक्ख धर्म में शामिल होने के लिये अनंदपुर साहिब आने की इच्छा रखने लगे। इसकी खबर मुग़ल मंत्रियों के साथ-साथ हिन्दू मुखियों को और ब्राह्मण श्रेणी को भी मिल रही थी। इन दिनों ही गुरु साहिब ने अनंदपुर साहिब में शस्त्र बनाने का कारखाना भी लगा लिया था। भाई राम सिंघ सिकलीगर इस परियोजना का इंचार्ज था। इस कारखाने में बड़े अच्छे शस्त्र बनाये गये। इस की चर्चा सभी ओर होने लगी। बिलासपुर रियासत के राजा अजमेर चंद का पौत्र परमानंद पहले ही सिक्खों से ईर्ष्या करता था। उस ने आस-पास के राजाओं को भी भड़काया। कुछ चौधरी और रजवाड़े उस के उकसाने में आ गये। इस के बाद वह बहाने बनाने लगे कि किसी तरीके से अनंदपुर साहिब पर हमला किया जाये। इन दिनों एक बार (२३ जून १६९८ के दिन) गुरु गोबिन्द सिंघ साहिब भाई उदय सिंघ, भाई आलम सिंघ 'नच्चणा' और कुछ अन्य सिक्खों को ले कर शिकार के लिये गये। शिकार की खोज में वह अनंदपुर साहिब से काफ़ी दूर निकल गये। उधर बलीया चंद और आलम चंद कटोच भी शिकार के लिये निकले हुये थे। उन्हों ने गुरु साहिब पर अचानक हमला कर दिया। भाई उदय सिंघ और भाई आलम सिंघ ने भी तलवारें निकाल लीं। दोनों ओर से भयानक लड़ाई शुरू हो गई। बलीया चंद और आलम चंद दोनों घायल हो कर भाग गये।

बलीया चंद और आलम चंद अजमेर चंद को मिले। अजमेर चंद बिलासपुर से लाहौर गया और सूबेदार के पास जा कर शिकायत की। लाहौर के सूबेदार ने पैंदे खान और दीना बेग के नेतृत्व में सेना भेज कर अनंदपुर साहिब पर २६ जून १७०० के दिन आक्रमण करवा दिया। इस

लड़ाई में पैंदे खान और दीना बेग दोनों घायल हो कर और बहुत सारे सैनिक मरवा कर लाहौर की ओर भाग गये ।

तारागढ़ पर आक्रमण :

लाहौरी सेना के आक्रमण के बाद अजमेर चंद ने स्वयं हाथ आज़माने की कोशिश की । तारागढ़ का किला अनंदपुर साहिब से पाँच किलोमीटर दूर था । यहाँ खालसा सेना का एक छोटा सा दल रहा करता था । २९ अगस्त १७०० शुक्रवार के दिन अजमेर चंद और अन्य पहाड़ी राजाओं ने इस किले पर अचानक आक्रमण कर दिया । साहिबज़ादा अजीत सिंघ ने इस आक्रमण को दबाने के लिये कुछ सिंघ आगे किये । उन्हों ने बड़ी बहादुरी के साथ दुश्मन की सेना से टक्कर ली । उधर जब गुरु साहिब को आक्रमण का पता लगा तो उन्होंने भाई उदय सिंघ के नेतृत्व में १२५ सिंघों का दल भेजा । इस भीषण लड़ाई में बहुत से पहाड़ी सैनिक मारे गये । पहाड़ी राजाओं का नेता घमंड चंद भाई उदय सिंघ के हाथों बुरी तरह घायल हो गया । एक पहर की लड़ाई के बाद सैनिक भाग गये । इस लड़ाई में भाई कल्याण सिंघ (पुत्र शहीद भाई दिआल दास) भाई मंगत सिंघ भाई फेरु "सच्ची दाड़ी" के भाई, भाई ईश्वर सिंघ भी शहीद हुये । शाम के समय गुरु साहिब ने सभी किलों के सेनापतियों को चौकन्ना कर दिया ।

फतहगढ़ पर आक्रमण :

दूसरे दिन शुक्रवार ३० अगस्त को अजमेर चंद और उस के साथियों की सेना ने किला फतहगढ़ पर आक्रमण कर दिया । इस किले की केसगढ़ साहिब की ओर की दीवार अभी अधूरी थी । इस किले का सेनापति भाई भगवान सिंघ (पुत्र भाई मनी सिंघ) था । भाई भगवान सिंघ के नेतृत्व अधीन कुछ ही सिंघों ने पहाड़ी सेना का डट कर मुकाबला किया और बहुत सारे पहाड़ी सैनिकों को मार डाला । शाम होने के बाद पहाड़ी सेना मैदान छोड़ कर भाग गई । इस लड़ाई में भाई भगवान सिंघ, भाई जवाहर सिंघ (पुत्र भाई लक्खी राये वनजारा), भाई नंद सिंघ (पुत्र भाई आलम सिंघ, पौत्र भाई दरीया) शहीद हो गये ।

अगंमगढ़ पर हमला :

दो दिन अलग-अलग किलों पर आक्रमण कर के हार खाने के बाद अजमेर चंद ने तीसरे दिन ३१ अगस्त को किला अगंमगढ़ पर आक्रमण कर दिया। किला अगंमगढ़ अनंदपुर साहिब से डेढ़ किलोमीटर दूर था। उस समय इस किले में भी कुछ ही सिक्ख थे। करीब डेढ़ पहर लड़ाई हुई और अजमेर चंद और उस के साथी इस लड़ाई में भी बुरी तरह हारने के बाद भाग गये। इस लड़ाई में भाई बाघ सिंघ (भतीजा भाई मनी सिंघ) और भाई दरबारा सिंघ (पुत्र भाई नानू सिंघ दिलवाली और भाई दीवान दरबारा सिंघ) शहीद हो गये।

लोहगढ़ पर आक्रमण :

तीन दिन बुरी तरह हारने के बाद उस रात को अजमेर चंद, दूसरे पहाड़ी राजा और उन के मंत्री एकत्रित हुये। इन में अजमेर चंद का मामा केसरी चंद भी था। केसरी चंद ने चौथे दिन लोहगढ़ पर आक्रमण करने के लिये कहा। लोहगढ़ किले का द्वार सब से अधिक मज़बूत था। केसरी चंद के मंत्री कर्म चंद ने उन को रोकने का प्रयत्न किया किन्तु किसी ने उस की एक न सुनी। अजमेर चंद ने वृद्ध मंत्री परमानंद के कहने पर उनके एक हाथी को शराब पिला कर किले का द्वार तोड़ने के लिये भेजने का फ़ैसला किया। उस रात गुरु साहिब किला अनंदगढ़ में बैठे हुये थे। भाई चत्तर सिंघ बराड़ ने गुरु साहिब को इस की सूचना दी। गुरु साहिब ने उपस्थित सिक्खों में से मजीठा के दुनी चंद धालीवाल की डियूटी लगाई कि वह शराबी हाथी को रोके। दुनी चंद डर गया और रात को अनंदपुर साहिब से भाग गया। इस के बाद भाई बचित्र सिंघ ने गुरु साहिब से हाथी का सामना करने की आज्ञा मांगी। गुरु साहिब ने भाई बचित्र सिंघ को अपना 'नागिनी बरछा' दे कर लड़ाई के लिये तैयार किया। इस के बाद भाई उदय सिंघ ने घमण्डी राजा केसरी चंद को सज़ा देने की आज्ञा मांगी। गुरु साहिब ने उस को भी आशीरवाद किया। सुबह होने से पहले दोनों भाई किला लोहगढ़ पहुँच गये।

दूसरे दिन पहली सितम्बर को जब मदमस्त हाथी लोहगढ़ की ओर आया तो भाई बचित्र सिंघ ने पूरी ताकत लगा कर बरछे को हाथी के माथे

में इतनी ज़ोर से मारा कि वह बरछा हाथी के माथे पर बंधे तवीया में छेद करता हुआ बीच में फँस गया । भाई बचित्र सिंघ ने तेज़ी से बरछा खींच लिया । हाथी दर्द से चिंघाड़ता हुआ पीछे की ओर भागा । हाथी के पैरों के नीचे आकर बहुत से पहाड़ी सैनिक मारे गये । उधर भाई उदय सिंघ तेज़ी के साथ घोड़ा दौड़ा कर केसरी चंद के पास पहुँच गये और तलवार के एक ही वार से केसरी चंद का सिर काट लिया और नेजे पर लगा कर अनंदगढ़ किले में जा कर गुरु साहिब के पैरों में रख दिया । राजा केसरी चंद के मरने के बाद भाई मनी सिंघ, भाई शेर सिंघ और भाई नाहर सिंघ के नेतृत्व में सिक्खों ने बहुत सारे पहाड़ी सैनिक मार डाले । लोहगढ़ के बाहर चरणगंगा के मैदान में पहाड़ी सैनिकों के शवों के ढेर लग गये । इस के बाद कुछ ही क्षणों में अजमेर चंद और उस के साथी पहाड़ियों की सेना सर पर पैर रख कर भाग गई और बिलासपुर जा कर सांस ली । इस लड़ाई में भाई मनी सिंघ गम्भीर रूप से घायल हो गये । भाई आलम सिंघ (भाई मनी सिंघ के दादे के भाई का पुत्र), सुख्खा सिंघ (भतीजा भाई मनी सिंघ), खुशहाल सिंघ (पुत्र भाई मक्खन शाह लुबाणा) ने शहीदी प्राप्त की ।

अनंदपुर से निरमोहगढ़ :

चार दिन की लड़ाई में बुरी तरह हारने और मामा केसरी चंद सहित सैकड़ों सैनिकों को मरवाने के बाद अजमेर चंद ने पहाड़ी राजाओं का एक सम्मेलन बुलाया । सभी ने हार पर बहुत दुख प्रगट किया । केसरी चंद के मरने के बाद पहाड़ी राजाओं को बहुत सदमा पहुँचा । उन्हों ने महसूस किया कि वह गुरु साहिब को लड़ाई में हरा नहीं सकते । आखिर उन्हों ने एक उपाय सोचा । उन्हों ने वृद्ध मंत्री पंडित परमानन्द को अनंदगढ़ किले की ओर भेजा । उस ने २ अक्तूबर की रात को आटे की गाय बना कर किले के आगे रख दी, साथ एक पत्र भी रख दिया जिस पर लिखा हुआ था कि "हम कसम खाते हैं कि आगे से कभी अनंदपुर साहिब पर आक्रमण नहीं करेंगे । सभी ओर हमारी बदनामी हुई है । हम किसी को मुँह दिखाने लायक नहीं रहे । आप एक बार अनंदपुर साहिब छोड़ कर चले जायें और फिर कुछ दिनों के बाद ही लौट आना । इस से हमारा सम्मान

रह जायेगा।"

दूसरे दिन तीन अक्तूबर को गुरु साहिब को वह पत्र किले के पहरेदार ने दिया। गुरु साहिब ने कहा कि यह पत्थर के पुजारी पहाड़िये विश्वास के काबिल नहीं। किन्तु फिर भी यदि इन पर तरस करने पर इन का सम्मान बचता है तो इन पर तरस खाने से कोई हानि नहीं होगी। उन्हों ने भाई दया सिंघ, भाई उदय सिंघ और अन्य सभी के साथ बात कर के अनंदपुर साहिब छोड़ने का फ़ैसला कर लिया। गुरु साहिब ने ४ अक्तूबर को अनंदगढ़ से चल कर कीरतपुर साहिब से ४ किलोमीटर दूर निरमोहगढ़ की एक पहाड़ी पर जा कर डेरा लगा लिया। जब दर्शनार्थियों को इस का पता लगा तो वो निरमोहगढ़ की ओर गुरु साहिब के दर्शन करने जाने लगे। अनंदपुर साहिब फिर खाली हो गया।

उधर जब अजमेर चंद को पता लगा कि गुरु साहिब अनंदपुर साहिब खाली कर के निरमोहगढ़ चले गये हैं तो उस ने अपने साथियों के साथ बात की कि इस समय गुरु साहिब किसी किले में नहीं बल्कि एक पहाड़ी पर बैठे हुये हैं। यदि इस अवसर पर आक्रमण किया जाये तो गुरु साहिब को घेर कर समाप्त किया या बन्दी बना लिया जा सकता है। जब अजमेर चंद के इस षड्यन्त्र का पता उस की दादी के बहनोई, बसाली के राजा, सलाही चंद, को लगा तो उस ने इस कार्यवाही से रोका। किन्तु अजमेर चंद पर भूत सवार था। उस ने निरमोहगढ़ पर हमला करने की तैयारी शुरू कर दी।

निरमोहगढ़ पर हमला :

८ अक्तूबर १७०० के दिन अजमेर चंद की सेना ने निरमोहगढ़ में गुरु साहिब पर आक्रमण कर दिया। सवा पहर दोनों ओर से भीषण युद्ध हुआ। अजमेर चंद की सेना के पास गोला बारूद काफ़ी था और उस के सैनिकों की संख्या भी अधिक थी। गुरु साहिब के पास थोड़े से ही साथी थे। इस पर भी सिक्ख पूरी हिम्मत के साथ लड़े। इस लड़ाई में बहुत से पहाड़ी सैनिक मारे गये। अपनी हार देख कर अजमेर चंद की सेना मैदान छोड़ कर भाग गई। इस लड़ाई में दीवान साहिब सिंघ (पुत्र भाई मती दास), भाई मथरा सिंघ (पुत्र शहीद भाई दयाल दास), भाई सूरत सिंघ, भाई देवा

सिंघ, भाई अनूप सिंघ धालीवाल, भाई सरूप सिंघ धालीवाल शहीद हो गये ।

निरमोहगढ़ में बुरी तरह हारने के बाद अजमेर चंद ने अपने वृद्ध मंत्री पंडित परमानंद को सरहिन्द भेजा और बताया कि इस समय गुरु गोबिन्द सिंघ साहिब एक पहाड़ी पर बैठे हैं इस लिये इस हालत में उन पर आक्रमण करना बहुत लाभदायक रहेगा । सूबा सरहिन्द ने अपने एक सेनापति रुसतम ख़ान को सेना दे कर निरमोहगढ़ की ओर भेज दिया । उधर जब भाई चितर सिंघ और भाई बचित्र सिंघ (दोनों पुत्र भाई मनी सिंघ) को पता लगा कि रुसतम खान निरमोहगढ़ पर आक्रमण करने के लिये चल पड़ा है तो उन्होंने तलवार पर हाथ रख कर ऐलान किया कि वह उस पठान सेनापति के साथ आमने-सामने हो कर हाथों-हाथ लड़ाई करेंगे । १३ अक्तूबर १७०० के दिन रुसतम ख़ान और उस का भाई नासर ख़ान अपनी सेना को ले आया । उन्हों ने आते ही निरमोहगढ़ की टिब्बी से थोड़ी दूर एक अन्य टिब्बी पर मोर्चा लगा लिया । कुछ पलों में ही नासर ख़ान ने गुरु जी की ओर तोप का गोला मारा । उस गोले से गुरु जी पर चौर करने वाला भाई राम सिंघ शहीद हो गया । गुरु साहिब ने उसी समय निशाना बांध कर ऐसा तीर चलाया था कि रुसतम ख़ान उसी स्थान पर मर गया । इस अवसर पर भाई उदय सिंघ के तीर से नासिर ख़ान भी मारा गया । दोनों भाईयों के मरने के बाद भी मुग़ल सेना पीछे न हुई और आमने-सामने लड़ाई हुई । शाम तक भीषण युद्ध होता रहा । आखिर थक कर मुग़ल सेना सरहिन्द को लौट गई । इस लड़ाई में भाई राम सिंघ, भाई हिम्मत सिंघ और भाई मोहर सिंघ शहीद हो गये ।

मुग़ल सेना की असफलता के बाद अजमेर चंद फिर स्वयं सेना ले कर निरमोहगढ़ आ गया । उस ने चारों ओर से निरमोहगढ़ की घेरा बंदी कर ली । गुरु साहिब ने सिंघों को चार दलों में बाँट कर दुश्मन की सेना का ज़बरदस्त सामना किया । ढ़ाई पहर ज़बरदस्त लड़ाई हुई । दोनों सेनाओं की बहुत हानि हुई । इस लड़ाई में भाई जीता सिंघ, भाई नेता सिंघ और अन्य कई शहीद हो गये ।

गुरु साहिब बसाली गये । :

आज कल बसाली (निरमोहगढ़ और कीरतपुर साहिब से १३-१४

किलोमीटर दूर) एक गाँव है । कभी यह एक छोटी सी रियासत थी । इस का राजा सलाही चंद था । सलाही चंद की पत्नी रानी हीरा देवी बिलासपुर की पुरानी रानी चम्पा की सगी बहिन थी । रानी चम्पा आखिरी सांसों तक गुरु घर की सेवादार रही थी । जब हीरा देवी को सलाही चंद से पता लगा कि अजमेर चंद ने धोखा कर के गुरु साहिब पर आक्रमण किया है और निरमोहगढ़ की घेरा बंदी की हुई है तो उन्हों ने १४ अक्तूबर की रात को अपना मंत्री गुरु जी की ओर भेजा और उन्हें निरमोहगढ़ छोड़ कर बसाली आने के लिये कहा । बसाली रियासत सतलुज के दूसरी ओर थी । १५ अक्तूबर की पहली सुबह होने से पहले राजा सलाही चंद और उस की सेना सतलुज के दूसरे किनारे पर आ गई । गुरु जी और उनके साथी १५ अक्तूबर प्रात: काल निरमोहगढ़ से सतलुज की ओर चल पड़े जिस से वह नदी पार कर के बसाली जा सकें । उधर जब अजमेर चंद को इस का पता लगा तो उस ने अपनी सेना और मुग़ल सेना को एकत्र करके गुरु साहिब पर आक्रमण कर दिया । गुरु साहिब ने सिक्ख सैनिकों को दो भागों में बाँट दिया और स्वंय नदी पार कर गये । इधर भाई उदय सिंघ के नेतृत्व में सिंघों ने तीरों और गोलों की ऐसी बरसात की कि एक बार तो दुश्मनों की तौबा कर दी । सभी सैनिक नदी पार कर गये और गुरु जी से जा मिले । इस लड़ाई में भाई केसरा सिंघ, भाई गोकल सिंघ आदि शहीद हो गये ।

शाम के समय गुरु साहिब बसाली पहुँच गये । बसाली के लोगों ने गुरु साहिब का बड़ी गरम-जोशी के साथ स्वागत किया । गुरु साहिब राजा सलाही चंद के महल में रहे और सिक्खों के लिये पहाड़ी के नीचे तम्बू लगा दिये । इस प्रकार कुछ दिन बीते गऐ ।

कलमोट की लड़ाई :

२० अक्तूबर १७०० के दिन गुरु साहिब ने भाई उदय सिंघ को सिक्खों को शिकार पर जाने की तैयारी करने को कहा । सिंघ नगारे पर चोट लगा कर शिकार की खोज में निकल गये । बसाली से काफी दूर नंगल की ओर पहाड़ों के रास्ते में सिक्खों को एक व्याध्र का बच्चा दिखाई दिया ।

भाई उदय सिंघ ने उस का पीछा किया और निशाना बांध कर गोली मार दी। व्याघ्र घायल होकर आगे की ओर भागा और कलमोट गाँव के नज़दीक पहुँच कर गिर पड़ा। इतने समय में सिक्ख भी वहाँ पहुँच गये। गाँव वासियों ने किसी छोटी सी बात पर झगड़ा शुरू कर दिया। झगड़े में भाई जीवन सिंघ पुत्र भाई प्रेम चंद (भाई प्रेम चंद भाई मनी सिंघ के दादा का भाई था) को गहरी चोट लगी। जिस से वह उसी स्थान पर ही शहीद हो गये। इस के बाद सिक्खों और गाँव के गुज्जरों और रंघड़ों में हाथों-हाथ लड़ाई हुई। लड़ाई में कुछ कलमोट वासी मारे गये। सिंघों के साथ लड़ाई का सामना न कर सकने पर गाँव वाले जान बचा कर घरों में जा छिपे। सिंघ भाई जीवन सिंघ का शव लेकर बसाली आ गये और वहाँ उन का संस्कार कर दिया।

गुरु साहिब लौट कर अनंदपुर साहिब पहुँचे :

इस दौरान राजा सलाही चंद ने मध्यस्थ बन कर गुरु साहिब और अजमेर चंद के बीच झगड़ा समाप्त करवा दिया। इस के बाद ३० अक्तूबर १७०० के दिन गुरु साहिब फिर अनंदपुर साहिब पहुँच गये। अनंदपुर साहिब के सभी ओर खालसा राज कायम हो गया। लोगों ने सुख की सांस ली।

माता जीत कौर जी का देहांत :

अनंदपुर साहिब लौटने के पाँच सप्ताह बाद ५ दिसम्बर १७०० के दिन माता जीत कौर (सुपत्नी गुरु गोबिन्द सिंघ साहिब) का देहांत हो गया। आप का संस्कार अंगमपुरा गाँव के बाहर चक्क नानकी की सीमा के नज़दीक किया गया। आप के लिये रखे गये पाठ का भोग २१ दिसम्बर के दिन डाला गया। इस समय चौथे साहिबज़ादा बाबा फतहि सिंघ बहुत छोटी उम्र के थे।

बजरूड़ीयों को सज़ा :

१५ मार्च १७०१ के दिन दड़प देश की संगत गुरु साहिब के दर्शन करने के लिये अनंदपुर साहिब आई तो रास्ते में बजरूड़ गाँव (अनंदपुर साहिब से लगभग १० किलोमीटर दूर) के गुज्जरों और रंघड़ों ने लूट ली। इन सिक्खों में अधिकतर अभी अमृतधारी नहीं थे। उन की हालत देख कर गुरु साहिब ने साहिबज़ादा अजीत सिंघ और भाई उदय सिंघ के नेतृत्व

में १०० सिक्खों को बजरूड़ के लुटेरों को सजा देने के लिये भेजा । १७ मार्च १७०१ के दिन इन्होंने बजरूड़ पहुँच कर गाँव के लुटेरे मुखिया चित्तू और मित्तू को कड़ी सजा दी । इस घटना के बाद फिर कोई शिकायत अनंदपुर साहिब नहीं पहुँची ।

होला महल्ला का मेला :

२४ फरवरी से ३ मार्च १७०२ तक अनंदपुर साहिब में बहुत रौनक रही । इन दिनों हिन्दू होली का त्यौहार मना रहे थे । गुरु साहिब ने सिक्खों को इस व्यर्थ की प्रथा से बचने के लिये शिक्षा दी । गुरु साहिब ने ४ मार्च १७०२ के दिन होला महल्ला मनाया । इस दिन सभी सिक्ख किला अगंमगढ़ से आ पहुँचे । यहाँ आकर अरदास करने के बाद शब्द पढ़ते हुये सिक्ख किला लोहगढ़ तक पहुँचे । सुरमयी रंग की दस्तारों का जलूस काली घटाओं जैसा दिखाई पड़ रहा था । जलूस ने लोहगढ़ पहुँच कर शब्द पढ़े और फिर लौट कर अनंदगढ़ की ओर चल पड़े । उस दिन घुड़सवारी, भाला बाजी, तलवार चलाना, गतका, गुरिल्ला युद्ध और खेलों के मुकाबले करवाये गये । उस दिन से सिंघों ने हर साल होला महल्ला मनाना शुरू किया जो आज तक मनाया जाता है (किन्तु कुछ लोग हिन्दू होली की नकल करते हुये अब रंग भी डालने लगे हैं । यह गुरु साहिब की शिक्षा के विपरीत है) ।

गुरु साहिब पर एक और आक्रमण :

जनवरी १७०३ में गुरु साहिब कुरूक्षेत्र गये लौटते हुये १४ जनवरी १७०३ के दिन राजा अजमेर चंद के ईशारों पर सैद बेग और अलफ़ ख़ान ने चमकौर के निकट गुरु साहिब पर हमला कर दिया । गुरु साहिब के साथ माता गुजरी, तीनों मातायें और सवा सौ के लगभग सिक्ख थे । भाई उदय सिंघ और अन्य योद्धाओं ने हमलावरों की अच्छी पिटाई की । हमलावरों ने दौड़ कर अपनी जान बचाई ।

देवकी दास ब्राह्मण की पत्नी वापिस दिलाना :

६ मार्च १७०३ के दिन देवकी दास नाम का एक ब्राह्मण अनंदपुर साहिब गुरु साहिब के पास आया और प्रार्थना की कि उसकी बीवी को दुआबे का चौधरी जबर जंग ज़बरदस्ती ले गया है । गुरु साहिब ने साहिबज़ादा

अजीत सिंघ और भाई उदय सिंघ के नेतृत्व में एक सौ सिक्खों को ब्राह्मण की पत्नी दिलाने के लिये भेजा । उन्हों ने ७ मार्च १७०३ के दिन बस्सी (जिला होशियारपुर) को घेरा । जबर जंग ने ब्राह्मणी को लौटाने के स्थान पर टक्कर ली । लड़ाई में जबर जंग ख़ान मारा गया और ब्राह्मण को उस की पत्नी वापिस मिल गई । जब यह समाचार लोगों तक पहुँचा तो उन्होंने सिक्खों की बहुत प्रशंसा की । गुरु साहिब के इन्साफ दिलाने की और उन की प्रशंसा की खबर जब अजमेर चंद को पहुँची तो वह और भी ईर्ष्या से भर गया ।

अजमेर चंद के नये आक्रमणों की शुरूआत :

अक्तूबर १७०० में राजा सलाही चंद ने गुरु साहिब और अजमेर चंद बिलासपुरी में लड़ाई खत्म करवा दी थी । अक्तूबर १७०२ में राजा सलाही चंद का देहांत हो गया । इस के बाद अजमेर चंद फिर हरकते करने लगा । उस के सैनिक घास-चारा लेने के बहाने अनंदपुर साहिब में कोई न कोई शरारत करते रहते थे । उस के साथ हंडूर (अब नालागढ़) का रजवाड़ा भी शामिल हो गया था । छोटी-मोटी झड़पों के बाद आखिर २ नवम्बर १७०३ के दिन अजमेर चंद, हंडूरी राजा और इन के अन्य साथियों की सेना ने अनंदपुर साहिब पर आक्रमण कर दिया । इधर से सिक्खों ने भी डट कर सामना किया । खालसा सैनिकों का नेतृत्व कर रहे एक दल का नेता भाई मान सिंघ निशानची था । उस ने निशान साहिब भूमि में गाड़ कर लड़ाई की । लड़ाई में घायल हो कर वह भूमि पर गिर पड़ा और निशान साहिब भी गिर गया । (लड़ाई शाम तक चलती रही अन्त में कई सैनिकों को मरवा कर अजमेर चंद बिलासपुर लौट आया) ।

निहंग फर्रे की शुरूआत :

भाई मान सिंघ के घायल होने और निशान साहिब के गिरने का समाचार जब गुरु साहिब के पास पहुँचा तो उन्हों ने उसी समय अपनी बड़ी दस्तार के नीचे बांधी हुई नीली केसकी में से एक फर्रा निकाल कर ऐलान किया कि अब खालसे का निशान कभी भी न टूटेगा, न गिरेगा, न झुकेगा । यह कह कर उन्हों ने उस फर्रे को अपनी दस्तार में सजा लिया । गुरु साहिब के पास बैठे भाई उदय सिंघ, भाई हिम्मत सिंघ, भाई साहिब सिंघ, भाई

मोहकम सिंघ और भाई आलम सिंघ 'नच्चणा' ने भी अपनी-अपनी नीली केसकियों से फर्रे निकाल कर दस्तारों में सजा लिये । उन के पास बैठे साहिबज़ादा फतहि सिंघ, जो अभी सिर्फ छः साल के थे, ने भी फर्रा सजा लिया । इस दिन से निहंग सिंघों के दलों के नेताओं की दस्तारों में आज कल सजे फर्रे की शुरूआत हुई ।

अनंदपुर साहिब की घेरा बंदी :

१२ मार्च १७०५ के दिन अजमेर चंद ने हंडूरी सैनिकों को साथ ले कर अनंदपुर साहिब पर फिर एक बार आक्रमण कर दिया । यह लड़ाई दो दिन चली । अजमेर चंद एक बार फिर हार गया । इस समय तक गुरु साहिब को पता लग चुका था कि अजमेर चंद, हंडूर तथा अन्य पहाड़ी राजाओं को साथ ले कर सूबा सरहिन्द के साथ मिल कर एक बड़े आक्रमण की तैयारी कर रहा था । इस अवसर पर एक बड़ा और लम्बा युद्ध होने के आसार थे । इस कारण गुरु साहिब ने २९ मार्च १७०५ के दिन अनंदपुर साहिब में रह रहे सारे सिक्खों का सम्मेलन बुलाया और उन्हें कहा कि सभी गृहस्थी सिंघ अपने बीवी बच्चों को ले कर अंनदपुर से चले जायें । माता सुन्दर कौर को भी भाई सेवा सिंघ के साथ बुरहानपुर की ओर भेज दिया गया । अब अनंदपुर साहिब में गुरु साहिब, माता गुजरी, चार साहिबज़ादे और लगभग पाँच सौ सिक्ख ही बाकी रह गये थे ।

३ मई १७०५ के दिन अजमेर चंद ने हज़ारों सैनिकों के साथ अनंदपुर साहिब को घेर लिया । गुरु साहिब ने सभी किलों में पूरी तैयारी की हुई थी पर उस समय अनंदपुर साहिब में अनाज कोई अधिक नही था । अजमेर चंद की सेना ने चारों ओर से घेरा डाला हुआ था । इस घेरे से आगे जाकर हंडूरी और सरहिन्दी सैनिकों ने एक और घेरा डाला हुआ था । धीरे-धीरे अनाज समाप्त होने लगा । सिक्ख चनों की एक मुट्ठी के साथ गुज़ारा करने लगे । इस हालत में कुछ सिंघ घबराने लगे । वह अनंदपुर साहिब का घेरा तोड़ कर निकलना चाहते थे । गुरु साहिब अभी कुछ समय रुकना चाहते थे । सिक्खों ने माता गुजरी को तैयार कर लिया था कि अनंदपुर साहिब छोड़ देना चाहिये । माता जी ने भी गुरु साहिब पर दबाव डाला । गुरु साहिब औरंगजेब को भेजी चिट्ठी के उत्तर के इन्तजार में थे । उस समय औरंगजेब अहमद नगर (दक्षिण) में रह रहा था जिस कारण

उत्तर आने में देर होनी ही थी। अन्त में ४ दिसम्बर १७०५ के दिन कुरान शरीफ की जिल्द पर लगी औरंगजेब की चिट्ठी ले कर शाही काज़ी अनंदपुर साहिब पहुँचा। उस में औरंगजेब ने लिखा था कि "गुरु जी अनंदपुर साहिब छोड़ कर काँगड़ कस्बे में आ जायें। वहाँ आने के बाद परिस्थिति पर विचार किया जायेगा।" गुरु साहिब ने इस चिट्ठी पर भाई दया सिंघ और अन्य मुख्य सिक्खों की उपस्थिति में विचार किया। उसी समय समाचार आया कि सरहिन्द के गर्वनर बजीर ख़ान की बड़ी सेना भी शीघ्र ही अनंदपुर साहिब पर आक्रमण करने वाली है। इस सेना का पहला पड़ाव रोपड़ में ५ दिसम्बर १७०५ की रात को होगा। औरंगजेब की चिट्ठी के सम्बंध में विचार करते हुए बहुत से सिक्ख चाहते थे कि गुरु साहिब परिवार सहित अनंदपुर साहिब से कांगड़ गाँव चले जाएं और बाद में खालसा मुग़लों और पहाड़ी सैनिकों के साथ दो हाथ करें। किन्तु गुरु साहिब ने कहा कि वह सिक्खों को अकेला छोड़ कर नहीं जायेंगे। गुरु साहिब ने फ़ैसला किया कि सभी ५०० सिक्ख इकट्ठे ही जायेगें। उन्हों ने अन्य किलों से भी सभी सिक्खों को बुला भेजा। उन्हों ने सभी सिक्खों को दो हिस्सों में बाँट दिया। एक ओर गुरु साहिब और उनके साथ चालीस 'दरबारी' सिक्ख थे (इन को अनंदपुर साहिब के "चालीस मुक्ते" कह कर याद किया जाता है)। दूसरी ओर माता गुजरी, चार साहिबज़ादे और अन्य चार सौ साठ सिक्ख थे। इन सभी को आगे अलग-अलग भागों में बाँट दिया गया। चार सौ साठ में से ५० सिक्ख भाई उदय सिंघ के साथ थे, १०० सिक्ख रंघरेटे के साथ, १०० सिंघ भाई बचित्र सिंघ के साथ थे, १०० सिंघ माता गुजरी और साहिबज़ादों के साथ और अन्य १०० सिक्ख एक अलग दल में जाने थे। ४० में ३७ मुक्ते गुरु साहिब के साथ जाने थे (भाई उदय सिंघ, भाई जीवन सिंघ और भाई बचित्र सिंघ तीनों चालीस में मौजूद थे किन्तु इन्हें सैनिक दलों का नेतृत्व भी दिया गया था।

अनंदपुर साहिब छोड़ना :

५-६ दिसम्बर के दिन, दो घड़ी रात बीती, गुरु साहिब "चक्क नानकी" की सीमा पर गुरु तेग़ बहादुर साहिब के अन्तिम संस्कार वाले स्थान (गुरुद्वारा सीस गंज) पहुँचे और भाई गुरबख्श दास उदासी को इस स्थान की सेवा दी और स्वंय सिक्खों को साथ ले कर किला अनंदगढ़ आ गये। अनंदगढ़

आ कर आप ने सब से पहले ९० सिक्खों के एक दल की सुरक्षा में माता गुजरी, दो छोटे साहिबज़ादे और एक सेवादार-एक सेवादारनी को कीरतपुर की ओर भेजा । इस के बाद औरंगजेब की चिट्ठी को सुरक्षित संभाला और फिर भाई उदय सिंघ के नेतृत्व में ५० सिक्खों के एक दल ने प्रस्थान किया और स्वंय भी चल पड़े । इन के पीछे साहिबज़ादा अजीत सिंघ और भाई बूढ्ढा सिंघ का दल आ रहा था । इन के पीछे भाई जीवन सिंघ और सबसे पीछे भाई बचित्र सिंघ का दल था । गुरु साहिब ने अनंदपुर साहिब से कीरतपुर साहिब होते हुये गाँव झक्खीयां की सीमा से निकल कर शाही टिब्बी की ओर से सरसा नदी के किनारे को जाना था और यहाँ से नदी पार करनी थी । गुरु साहिब ने परिवार को चमकौर की ओर भेजना था और स्वयं कोटला निहंग (रोपड़) की ओर जाना था ।

अभी गुरु साहिब ने कीरतपुर पार ही किया था कि पीछे से पहाड़ी सेना और मुग़ल सैनिकों ने तीरों और गोलियों की बौछार से आक्रमण कर दिया । गुरु साहिब ने अपने वस्त्र भाई उदय सिंघ को दे कर उस को शाही टिब्बी पर नियुक्त किया और उस के साथ ५० सिक्ख लड़ने के लिये दिये । उन्हों ने भाई उदय सिंघ को कहा कि साहिबज़दा अजीत सिंघ को कहना कि वह वहाँ न रुके तथा रोपड़ की ओर चला जाय । इस के बाद आप ने माता गुजरी, दो छोटे साहिबज़ादों और दो सेवादारों को चमकौर की ओर भेज दिया और गुरु गोबिन्द सिंघ साहिब, भाई बखशिश सिंघ, भाई गुरबख्शीश सिंघ और कुछ अन्य साथी सिक्ख कोटला निहंग की ओर चले गए ।

पीछे से आ रही पहाड़ी सेना ने पहले तो भाई जीवन सिंघ के दल पर आक्रमण किया । गाँव झक्खीयां की इस लड़ाई में भाई जीवन सिंघ रंघरेटा, बीबी भिक्खाँ (पुत्री भाई बजर सिंघ और सुपत्नी भाई आलम सिंघ 'नच्चणा') और एक सौ सिक्ख शहीद हो गये । दूसरी लड़ाई शाही टिब्बी पर हुई । इस लड़ाई में भाई उदय सिंघ और ५० सिंघ शहीद हो गये । भाई उदय सिंघ ने दसवें पातिशाह के वस्त्र पहने हुये थे । अजमेर चंद ने भाई उदय सिंघ को शहीद हुये देख कर उस को वस्त्रों के कारण गुरु गोबिन्द सिंघ साहिब समझ लिया और उस का सिर कटवा कर रोपड़ के नवाब की ओर भेजा और हल्ला मचा दिया कि 'हमने गुरु मार लिया है ।'

तीसरा दल भाई बचित्र सिंघ के नेतृत्व में सरहिंद से आई सेना के साथ मलकपुर (रंघड़ां) गाँव की सीमा पर जूझ पड़ा । यहाँ भी बड़ा भीषण युद्ध हुआ । इस लड़ाई में भाई बचित्र सिंघ बुरी तरह घायल हो गये । पीछे आ रहे साहिबज़ादा अजीत सिंघ, भाई मदन सिंघ और उनके साथियों ने भाई बचित्र सिंघ को घायल पड़े देखा तो उठा कर कोटला निहंग ले आये । गुरु गोबिन्द सिंघ साहिब वहाँ पहले ही उपस्थित थे । ६-७ दिसम्बर की रात को गुरु साहिब कोटला निहंग से चमकौर की ओर चल पड़े । वह माता गुजरी और बच्चों को पहले ही चमकौर भेज चुके थे । चमकौर से माछीवाड़ा, माछीवाड़ा से तलवंडी साबो और तलवंडी साबो से नंदेड़ गुरु साहिब की आगे की यात्रा का अलग इतिहास है ।

१७०५ के बाद अनंदपुर साहिब :

५-६ दिसम्बर १७०५ की रात को गुरु साहिब अनंदपुर साहिब से चले गये । बाद में चक्क नानकी में केवल गुरबख्श दास उदासी ही रह गया था । ६ तारीख़ सुबह अजमेर चंद की सेना ने अनंदपुर साहिब और चक्क नानकी पर आक्रमण कर दिया । पहाड़ी सैनिकों को जो कुछ भी मिला वह लूट कर ले गये । इस के बाद पहाड़ी सैनिकों ने अनंदगढ़ किला गिरा दिया । इस के बाद उन्होंने केसगढ़, लोहगढ़, होलगढ़ अगंमगढ़ और तारागढ़ के किले भी तोड़ दिये । उन्हों ने इन किलों पर अधिकार नहीं किया क्योंकि वे डरते थे कि जब गुरु साहिब लौट कर आयेंगे तो उसी समय ही पहाड़ी सैनिकों को किलों से निकाल देंगे । इस कारण उन्होंने किले तोड़ने का फ़ैसला किया था । कुछ ही दिनों में सभी किले तोड़ कर लगभग समतल ही कर दिये गये थे । बाद में इस भूमि पर फसलें बोई गई थी ।

पहाड़ी सैनिकों ने किलों के बाद अनंदपुर शहर और चक्क नानकी का अधिक हिस्सा भी तोड़ दिया । केवल सीसगंज और भोरा साहिब वाले स्थान ही बचे ।

उधर इस बात की आम चर्चा थी कि गुरु साहिब जल्दी ही अनंदपुर साहिब आयेंगे । अनंदपुर साहिब फिर बसाने की आवाज़ अजमेर चंद के कानों में भी पहुँची थी । इस के अतिरिक्त गुरु साहिब ने १५ अक्तूबर १७०७ के दिन लिखे आदेशनामा में भी कहा था कि : "हम जब कहिलूर पहुँचें, सिक्ख

शस्त्र बांध कर दर्शन करने आयें ।" इन शब्दों का साफ़ अर्थ था कि गुरु साहिब ने अनंदपुर साहिब ही लौटना था । इस समय अनंदपुर साहिब में कोई भी नहीं रहता था । सोढीयों के परिवार तो अनंदपुर साहिब ही नहीं कीरतपुर साहिब से भी चले गये थे । अब इन का बड़ा डेरा नाहन रियासत में था ।

बाबा बंदा सिंघ बहादर के समय अनंदपुर साहिब :

७ अक्तूबर १७०८ के दिन गुरु गोबिन्द सिंघ साहिब ज्योति जोत समा गये । उधर बंदा सिंघ बहादर ५ अक्तूबर के दिन नंदेड़ से पंजाब की ओर चल पड़ा था । बंदा सिंघ बहादर ने २६ नवम्बर १७०९ को समाणें पर अधिकार कर लिया । १५ दिसम्बर १७०९ के दिन सढ़ौरा और १४ मई १७१० को सरहिंद पर भी बंदा सिंघ का अधिकार हो चुका था । लेकिन ५ महीने के बाद जब बादशाह बहादुर शाह एक बड़ी सेना ले कर पंजाब की ओर चल पड़ा तो बंदा सिंघ बहादुर परिस्थिति को समझते हुये पहाड़ों की ओर निकल गया । उस ने २८ दिसम्बर १७१० को बिलासपुर पर आक्रमण कर दिया । अजमेर चन्द ने पहले तो टक्कर ली किंतु बाद में शस्त्र डाल दिये । यह अजमेर चन्द ही था जिस कारण गुरु साहिब को अनंदपुर छोड़ना पड़ा था । अनंदपुर साहिब से लगान वसूल करने की इच्छा रखने वाले अजमेर चन्द ने बंदा सिंघ को लगान देना मंजूर किया । इस लड़ाई में भाई केशो सिंघ और भाई भाग सिंघ भी शहीद हो गये ।

अजमेर चन्द द्वारा बाबा बंदा सिंघ की अधीनता स्वीकार करने के बाद कीरतपुर के सोढी धीरे-धीरे लौटने आरम्भ हो गये । किन्तु अनंदपुर साहिब में रौनक न हो सकी । बंदा सिंघ वहाँ ज्यादा समय न रुका । ९ जून १७१६ को बंदा सिंघ शहीद हो गया । इस के बाद अजमेर चन्द फिर बदल गया । अब उस को लगने लगा कि सिक्ख फिर नहीं उठ सकेंगे । मुग़लों की ओर से सिक्खों पर अत्याचार का दौर चलाये जाने के करण अजमेर चन्द चिंतामुक्त हो गया था । इन दिनों ही सोढी गुलाब सिंघ और शाम सिंघ (दोनों पुत्र बाबा दीप सिंघ, पौत्र बाबा सूरजमल और पड़पौत्र गुरु हरि गोबिन्द साहिब) अनंदपुर साहिब में आ कर रहने लगे । उन्हों ने अजमेर चन्द तक पहुँच की । अजमेर चंद ने सोढ़ियों से पैसे ले कर केवल साठ घुमां भूमि दी । सोढ़ी गुलाब सिंघ ने पैसे दिये और अजमेर चन्द के राज की प्रजा

बनना स्वीकार कर लिया। कुछ समय बाद गुलाब सिंघ ने स्वयं को ग्यारवाँ गुरु कहलवाना आरम्भ कर दिया। वह कलगी सजाकर गद्दी पर बैठने लगा और संगतों से कार भेंट, मुफ़्त सेवा और दसवंध लेना शुरू कर दिया। भाई गुरबख्श दास उदासी ने गुलाब सिंघ को गुरु कहलवाने से रोका। उन्हों ने समझाया कि गुरु साहिब स्वंय ही गुरगद्दी गुरु ग्रंथ साहिब को सौंप गये है। इस कारण यह पाखंड बन्द करना चाहिये। गुलाब सिंघ ने भाई गुरबख्श दास की बात क्या माननी थी उल्टे उन्हें बुरा-भला कहा और मार-पीट भी की। इस पर भाई गुरबख्श सिंघ अनंदपुर साहिब छोड़ कर कीरतपुर के पास गाँव "नक्कीयाँ" चले गये।

बाबा गुरबख्श दास के जाने के बाद कुछ समय बाद ही गुलाब सिंघ और उसके चारों पुत्रों का देहांत हो गया। इस के बाद उस का भी जल्दी ही देहान्त हो गया। इन मौतों को लोगों ने गुलाब सिंघ की ओर से गुरु कहलवाने की हरकत की सज़ा समझा। गुलाब सिंघ के बाद उस के भाई शाम सिंघ ने अपने आप को गुरु तो नहीं कहलवाया किन्तु वह संगतों से कार भेंट जरूर लेता रहा। उस के उत्तराधिकरियों की ओर से कार भेंटा लेने का सिलसिला १९२० तक चलता रहा और गुरुद्वारा सुधार लहर शुरू होने पर खत्म हुआ।

सोढी खानदान के पास केवल भोरा साहिब, सीस गंज और कुछ भूमि ही थी। इस के अतिरिक्त सारी भूमि बिलासपुर सरकार ने अधिकार में ले कर इलाके के राजपूतों (बहिरोक खानदान) को दे दी। हाँलाकि यह भूमि गुरु तेग़ बहादुर साहिब ने मूल्य दे कर रियासत बिलासपुर से ली थी। बाद में बहिरोक खानदान के उत्तराधिकारी सिक्ख बन गये। उन्हों ने इस में से कुछ भूमि सोढीयों को 'दान' में दे दी और कुछ अन्य सामाजिक कामों के लिये अरदास करवाई। आज भी इस भूमि का काफी हिस्सा इसी राजपूत खानदान के पास है एवं चक्क नानकी के लम्बरदार (आज १९९९ में) स. हरदियाल सिंघ भी इसी खानदान से है। सोढीयों के पास केवल दो ईमारतें ही थी, बाकी के दोनों नगर (चक्क नानकी और अनंदपुर) पूरे ही बहिरोक खानदान के पास ही थे। सभी किले पहाड़ी सैनिकों ने दिसम्बर १७०५ और जनवरी १७०६ में तोड़ डाले थे।

बंदा सिंघ के बाद सिक्खों पर अत्याचार का दौर चला तो बहुत से सिक्ख अनंदपुर साहिब की ओर आ गये किन्तु जब यहाँ भी सैनिक उड़न दस्तों के फेरे पड़ने लगे तो सिक्ख पहाड़ों की ओर निकल पड़े। इन दिनों में ही ५ मार्च १७४८ के दिन एक "सर्बत खालसा" सम्मेलन अनंदपुर साहिब में हुआ। ऐसा लगता है कि अमृतसर पर मुग़लों का अधिकार होने के कारण सिक्खों के सम्मेलन अनंदपुर साहिब, बीकानेर तथा अन्य दूर स्थित सुरक्षित स्थानों पर हुआ करते थे। यह भी हो सकता है कि इस सम्मेलन के अतिरिक्त कई अन्य सर्बत खालसा सम्मेलन भी अनंदपुर साहिब में हुये होंगे।

इन दिनों दो सिक्ख, बाबा शेर सिंघ और बाबा जलमस्त सिंघ, एक बार अनंदपुर साहिब आये। उन्हों ने अनंदपुर साहिब की दशा देख कर यहीं पर रहने का फ़ैसला किया। उन्हे एक ओर अजमेर चंद और दूसरी ओर गश्ती सेना का डर था किन्तु फिर भी वे डटे रहे। इन दोनो सिक्खों ने कितनी देर तक सेवा की थी इस का पता नहीं लगता। कुछ स्रोतों से बाबा शेर सिंघ के शहीद होने का पता लगता है। ऐसा लगता है कि यह शहीदी मार्च १७५३ में उस समय हुई जब बहुत सारे सिक्ख होला महल्ला के अवसर पर अनंदपुर साहिब एकत्रित हुये थे और अदीना बेग की सेना ने अचानक आक्रमण कर के सैकड़ों सिक्खों को शहीद कर दिया था।

बाबा शेर सिंघ के बाद गुरबख्श सिंघ वासी गाँव लील्ह (ज़िला अमृतसर) ने अनंदपुर साहिब की सेवा की। वह १७६४ में अमृतसर भी गये थे। वहाँ जाकर उन्हों ने अकाल तख़्त साहिब और दरबार साहिब की सेवा का दायित्व ग्रहण किया। वह पहली दिसंबर १७६४ के दिन अपने ३० साथी सिक्खों सहित, अहमद शाह दुरानी के सैनिकों के साथ लड़ते शहीद हो गये। बाबा गुरबख्श सिंघ के बाद कुछ स्थानिय सिक्ख अनंदपुर साहिब में सेवा करते रहे। कुछ दिन भाई सुक्खा सिंघ (लेखक गुर बिलास पातशाही दसवीं) भी केसगढ़ साहिब में सेवा करते रहे। १७९० में बाबा बघेल सिंघ (करोड़ा सिंघीया मिसल) भी दिल्ली के गुरुद्वारों की सेवा के बाद यहाँ आ गये और यहाँ के गुरुद्वारों की सेवा-सम्भाल करते रहे। बाबा बघेल सिंघ ने केसगढ़ की ईमारत के लिये काफ़ी रकम दी।

१९वीं सदी के आरम्भ में पटियाला का राजा करम सिंघ और उस

के पुत्र राजा नरिंदर सिंघ ने भी अनंदपुर साहिब नगर और इस के गुरुद्वारे की ईमारतों को सुधारने में हिस्सा लिया । उन्हों ने एक बुंगा भी बनवाया जो ''राजा का बुंगा'' के नाम से जाना जाता था । पटिआला के राजा के समय से गुरुद्वारा सीस गंज, भोरा साहिब और दमदमा साहिब की ईमारतों का बहुत सुधार हुआ ।

१८१२ में बिलासपुर के राजा महाँचंद (पौत्र अजमेर चन्द) ने सिक्खों से कर मांगा और नहीं मिलने पर अनंदपुर साहिब पर आक्रमण कर दिया । इस समय अनंदपुर साहिब में सुरजन सिंघ (पुत्र नाहर सिंघ और पौत्र श्याम सिंघ) रहता था । उन दिनों ही स. हुकमा सिंघ चिमनी की सेना भी पास ही किसी इलाके में थी (वह सोढी सुरजन सिंघ की सहायता पर आ गया और महाचन्द को बुरी तरह हार दी । इस के बाद किसी बिलासपुरी या किसी अन्य पहाड़ी राजा ने अनंदपुर साहिब पर आक्रमण करने का साहस न किया ।

१८१४ में महाराजा रणजीत सिंघ द्वारा डोगरों का पक्ष लेने पर नाराज हो कर अकाली फूला सिंघ अमृतसर से अनंदपुर साहिब आ गये । इन दिनों ही जींद के राजा प्रताप सिंघ की अग्रेजों के साथ खटपट होने के कारण उस ने अनंदपुर साहिब आ कर अकाली फूला सिंघ के पास शरण ले ली । अग्रेजों ने महाराजा रणजीत सिंघ, राजा जसंवत सिंघ नाभा और राजा मलेरकोटला से सहायता मांगी । इन तीनों ने अपनी सेना अकाली फूला सिंघ और राजा प्रताप सिंघ को बंदी बनाने के लिये अनंदपुर साहिब भेज दी । जब यह सेना अनंदपुर साहिब के पास पहुँची तो उन को पता लगा कि उन्हें अकाली फूला सिंघ को बंदी बनाने के लिये लाया गया है तो उन्हों ने लड़ने से मना कर दिया । जब महाराजा रणजीत सिंघ को इस कार्यवाही की खबर पहुँची तो उस ने बाबा साहिब सिंघ बेदी को मध्यस्त बना कर अकाली फूला सिंघ से माफ़ी मांगी । इस के बाद अकाली फूला सिंघ फिर अमृतसर रहने लगे ।

१८१५ के बाद अनंदपुर साहिब में भाई करम सिंघ, बाबा खड़क सिंघ, भाई बुध सिंघ, बाबा पूरन सिंघ, भाई अमर सिंघ ने लगभग १०० साल सेवा की । यह सभी सेवादार और ग्रंथी १६९९ की वैसाखी के दिन की सिक्ख-दस्तार के रंग की याद में ''सुरमई'' दसतारें सजाया करते थे ।

२० वीं सदी के आरम्भ में वैद्य बाबा संपूरन सिंघ केसगढ़ साहिब और अन्य गुरुद्वारों की सेवा सुरक्षा करते रहे। आप अच्छे ग्रंथी होने के साथ-साथ एक वैद्य भी थे। आप ने इलाके के लोगों की बहुत सेवा की। आप के बाद भाई अमर सिंघ ने यहाँ की सेवा की। आप कई वर्षों तक सेवा करते रहे और १९४८ में आप का देहान्त हो गया।

अनंदपुर साहिब १९४७ के बाद :

अनंदपुर १९४७ के बाद भी अकाली दल का एक विशेष केन्द्र बन गया। अकाली दल के बहुत से सम्मेलन अनंदपुर साहिब में हुये। इन में सर्व हिन्द अकाली कान्फ़्रेन्स और गुरमति समारोह भी थे। सिक्ख स्टूडेन्टस फ़ैडरेशन ने भी कई गुरमति ट्रेनिंग कैंप अनंदपुर साहिब में चलाये। शिरोमणि अकाली दल ने भी एक गुरमति ट्रेनिंग कैंप १९८३ में लगाया था।

अनंदपुर साहिब का मता :

अनंदपुर साहिब का नाम सिक्ख इतिहास में एक अन्य विशेष घटना के कारण भी जाना जाता है। १६-१७ अक्तूबर १९७३ के दिन पंथ की सिरमौर जत्थेबंदी शिरोमणि अकाली दल की अंतिंग कमेटी ने यहाँ अपना नया राजनीतिक आर्थिक और धार्मिक कार्यक्रम जारी किया। बाद में इसको "अनंदपुर साहिब दा मता" के नाम से जाना जाने लगा।

खालसा जी का ३०० साला दिन :

गुरु गोबिन्द सिंघ की ओर से खालसा प्रगट करने की तीसरी शताब्दी के सम्बंध में अनंदपुर साहिब में बहुत बड़ी परियोजनायें जारी की गई। इन में कुछ पंजाब सरकार ने और कुछ शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी ने बनाईं। पंजाब सरकार ने तो इस नगर को "आठवाँ अजूबा" और "२१ वीं सदी का शहर" बनाने का ऐलान भी किया। सरकारी परियोजनाओं में निशाने खालसा, सिक्ख हैरीटेज म्युजियम, तीन तारा होटल आदि भी शामिल है। शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी ने ३०० किताबें छापनें, सेमीनार करवाने, इन्टरनेशनल कांफ़्रेन्स करने, सर्व धर्म समारोह एवं कई अन्य कार्यक्रम और समारोहों का ऐलान किया है और बहुत से अन्य प्रोग्राम और परियोजनायें अभी जारी करनी है। १४ अप्रैल १९९९ का दिन अनंदपुर साहिब के इतिहास में एक और विशेष यादगारी दिन होगा।

अनंदपुर साहिब का नक्शा

चक्क नानकी और अनंदपुर साहिब नौवें और दसवें पातिशाह ने बसाये थे । चक्क नानकी, अनंदपुर साहिब, सहोटा, लोदीपुर, अगंमपुर, मटौर अब इतने बस चुके है कि एक साधारण आदमी इन की सीमाओं के सम्बंध में कुछ नहीं बता सकता । केवल पटवारी और लंबरदार ही इन गाँवों की सीमाओं के सम्बंध में जानते है । बस अड्डे से केसगढ़ साहिब की ओर जाने वाली ढिक्की के नीचे चौंक में तीन गाँवों, चक्क नानकी, अनंदपुर साहिब और लोदीपुर की सीमाऐं आ मिलती है । गुरुद्वारा सीसगंज, दमदमा साहिब, भोरा साहिब चक्क नानकी की सीमायें थी । गुरु के महल गुरु साहिब का निवास स्थान था । बस स्टैंड, हस्पताल, लड़कियों का सरकारी स्कूल चक्क नानकी में है । होलगढ़ गुरुद्वारे के पास चक्की का आरा चक्क नानकी में है और किनारा सहोटा गाँव में है । रेलवे का पुल चक्क नानकी में है । केसगढ़ साहिब के नीचे की ओर का सरोवर और मिल्क बार गाँव लोदीपुर में है । केसगढ़ साहिब और साथ के बाजारों से केसगढ़ और अनंदगढ़ किले तक का सारा इलाका अनंदपुर साहिब में है । चरणगंगा का पुल चक्क नानकी में है । खालसा कालेज गाँव मटौर में है । अर्थात् इन सभी गाँवों की सीमायें सिर्फ सरकारी काग़ज़ों से ही मालूम हो सकती है । आजकल यह सारे गाँव अनंदपुर साहिब का हिस्सा ही कहलाते है ।

१६६५ से १९९९ तक ३३४ साल में अनंदपुर साहिब ज़ोन में बहुत बदलाव आये हैं । सतलुज नदी, जो केसगढ़ की पहाड़ी के साथ बहती थी, अब लगभग पाँच किलोमीटर दूर चली गई है । "हिमैती नाला", जो अनंदगढ़ किले की सुरक्षा करता था, का नामों निशान मिट गया है । चरणगंगा पर पुल बन गया है केसगढ़ के साथ की तम्बू वाली पहाड़ी घुल कर अदृश्य हो चुकी है । जब केसगढ़ साहिब गुरुद्वारा बनाया गया था उस समय तक

केसगढ़ की पहाड़ी भी कम से कम लगभग दस फुट घुल चुकी थी । केसगढ़ और अनंदगढ़ के बीच वाली पहाड़ी को काट कर उस में सड़क बना दी गई है । शहर में अनगिणत ईमारतें बनी है । आज का अनंदपुर साहिब गुरु के अनंदपुर साहिब से बहुत अलग है पर इसके बावजूद भी गुरु साहिब से सम्बंधित गुरुद्वारों को सही स्थान पर बनाया गया है ।

आज अनंदपुर साहिब एक तहसील है । इस में अनंदपुर साहिब, चक्क नानकी, अगंमपुर, सहोटा, लोदीपुर, मीयांपुर, मटौर (अनंदपुर साहिब कानूंगो इलाका), जिंदबड़ी, कलमोट, नंगल (नंगल कानूंगो इलाका), काहनपुर खूही, नूरपुर बेदी (नूरपुर बेदी कानूंगो इलाका) बजरूड़, बसाली, चनौली, (तख़्तगढ़ कानूंगो इलाका) आदि २४० गाँव भी है । इन कानूंगो इलाकों के अतिरिक्त "गुरु का लाहौर" और गुरुद्वारा तारागढ़ (ज़िला बिलासपुर) हिमाचल में है । अनंदपुर साहिब के इतिहास से संबंधित घटनायें और गुरुद्वारें में से अधिकतर अनंदपुर साहिब और कीरतपुर साहिब में है किन्तु कलमोट, बसाली, बजरूड़, बिभौर साहिब, बस्सी कलां, भट्ठा साहिब, माछीवाड़ा (और माछीवाड़ा से तलवंडी साबो और तलवंडी साबो से नंदेड़) आदि इन कानूंगो इलाकों से दूर है । गुरपलाह, बिलासपुर, नाहन, पाऊंटा साहिब, भंगाणी, नदौण, रिवालसर आदि हिमाचल प्रदेश में है । कुछ स्थानों पर अभी गुरुद्वारे बनने है । हो सकता है कि खालसा प्रगट करने की तीसरी शताब्दी के बाद यह गुरुद्वार भी बना दिये जाये ।

अनंदपुर साहिब का क्षेत्र कुल ८६ हैक्टर है । चक्क नानकी का ७८ हैक्टर, सहोटा का १४६ हैक्टर, लोदीपुर का ५३७ हैक्टर और अगंमपुर २०८ हैक्टर, मीयांपुर का ७६ हैक्टर और अगंमपुर का १२४७ हैक्टर है ।

अनंदपुर साहिब की जनसंख्या गुरु साहिब के समय कुछ सैंकड़े ही थी । इस के अतिरिक्त कई सैकड़ों सिक्ख हर समय ही गुरु साहिब के दर्शनों के लिये आया करते थे । मार्च के आखिरी दिनों में हज़ारों की संख्या में श्रद्धालु अनंदपुर साहिब में आया करते थे । ५-६ दिसम्बर १७०५ की रात को जब गुरु साहिब ने अनंदपुर साहिब छोड़ दिया उस समय सिर्फ भाई गुरबख्श दास ही यहाँ रह गये थे । कुछ वर्षों के बाद सोढी गुलाब सिंघ और शाम सिंघ के परिवार यहाँ बसने लग गये । उन के अतिरिक्त,

राजा अजमेर चन्द ने जिन स्थानीय राजपूतों (बहिरोक परिवारों) को भूमि दे दी थी, वे भी यहाँ रहते थे । बाद में बहिरोकों के उत्तराधिकारी सिंघ बन गये । आज भी चक्क नानकी के लम्बरदार हरदियाल सिंघ उस बहिरोक खानदान में से है और काफी जायदाद के मालिक है ।

धीरे-धीरे अनंदपुर साहिब फिर बसना शुरू हो गया । अकाली फूला सिंघ के समय सोढीयों का मुखिया सरदार सुरजन सिंघ और उसका परिवार भी वहाँ रहा करता था । उस समय अनंदपुर साहिब की जनसंख्या दो तीन हज़ार के लगभग थी । इस के बाद जनसख्ंया बढ़नी शुरू हो गई । सन् १८६८ की जनगणना के समय यहाँ की जनसख्ंया ६८६९ थी । २० वीं सदी के आरम्भ तक यहाँ की जनसख्ंया इस से ज्यादा नही बढ़ी थी । उन दिनों बीमारी फैलने के कारण लोग यहाँ से जाने लगे । २० वीं सदी के मध्य तक अनंदपुर साहिब में जनसख्ंया बहुत थोड़ी रह गई थी । सन् १९४७ के बाद कुछ सिक्ख पाकिस्तान से आ कर यहाँ बस गये । फिर भाखड़ा, नंगल, गंगूवाल परियोजना के साथ भी कई लोग यहाँ आ कर बस गये । धीरे-धीरे इस की जनसख्ंया बढ़ती गई । आजकल (१९९९ में) अनंदपुर साहिब की नगरपालिका के इलाके की आबादी लगभग १३००० है । इस में अगंमपुर, मटौर और आस-पास के इलाके की जनसख्ंया शामिल नहीं है ।

खालसे के तीन सौ साला दिन के सम्बंध में अनंदपुर साहिब में कई नई ईमारतों की तैयारी शुरू हो गई है । इस से शहर में नया दृश्य तो बन जायेगा, किन्तु शहर का पुराना ऐतिहासिक दृश्य अदृश्य भी हो जायेगा । अनंदपुर साहिब का इलाका (कीरतपुर से नंगल और ऊना तक) किसी समय घना जंगल था । इस इलाके में एक ओर सतलुज नदी, चरणगंगा और नाले थे और दूसरी ओर पहाड़ थे । नदी और पहाड़ों के बीच घने जंगल में बहुत सारे हाथी, शेर, व्याघ्र और अन्य जानवर खुले-आम घूमा करते थे । जब यहाँ हाथियों की संख्या बहुत थी तब लोग इसको 'हथौत' हाथियों का घर) कहते थे । हथौत के इलाके की लम्बाई ५० किलोमीटर, चौड़ाई १०-१२ किलोमीटर थी । जब गुरु साहिब ने यह इलाका चुना उस समय कुछ जानवर तो पहाड़ी जंगलों में ही रह गये थे और कुछ शिकारियों

के हाथों मारे जा चुके थे । फिर भी लोग यहाँ नहीं रहते थे । गुरु साहिब ने इस जंगल में रमणीक वादी बसा दी थी । जहाँ दिन के समय भी कोई नहीं आता था, वहाँ हस समय सैकड़ों श्रद्धालुओं की रौनक (चहल-पहल) लगी रहती थी ।

अनंदपुर साहिब के सम्बंध में एक अन्य कथा भी प्रसिद्ध है कि यहाँ माखो और माटो नामक दो राक्षस रहा करते थे । इन दोनों ने माखोवाल और मटौर बसाये । यह कहानी स्थानिक प्रथा का हिस्सा है । इतिहास में इस का कोई विवरण नहीं मिलता । सिक्ख इतिहास में यदि "हथौत" के इलाके के सम्बंध में ज़िक्र आता है तो वह कीरतपुर साहिब के बाहर साईं बुड्ढण शाह के डेरे का है । जन्म-साखियों के अनुसार गुरु नानक साहिब अपनी यात्राओं के दौरान एक बार कीरतपुर के पास से जा रहे थे तो साईं बुड्ढण शाह के साथ वार्ता की थी और उन से दूध पीया था । इस के बाद हथौत के इलाके में १६२४ में गुरु हरिगोबिन्द साहिब आये और उन के बड़े बेटे बाबा गुरदित्ता ने कीरतपुर साहिब बसाया । १६६५ में गुरु तेग़ बहादुर साहिब ने "चक्क नानकी" बसाया और १६८९ में गुरु गोबिन्द सिंघ साहिब ने अनंदपुर साहिब की नींव रखी । इस प्रकार गुरु साहिब ने इस उजड़े इलाके में रौनक लगा दी ।

आज 'हथौत' के इलाके में गुरुद्वारों के कारण इलाके का नाम दुनिया भर के नक्शे में है, यह सतिगुरु की ही देन है । अनंदपुर साहिब से भट्ठा साहिब (रोपड़) तक की सारी धरती को सिक्ख शहीदों के बहे रक्त की बूंदों ने पवित्र किया हुआ है । बिलासपुर से अनंदपुर साहिब तक, बसाली से कलमोट तक, अनंदपुर साहिब से भट्ठा साहिब तक, भट्ठा साहिब से माछीवाड़ा तक, माछीवाड़ा से तलवंडी साबो तक और तलवंडी साबो से नंदेड़ तक गुरु साहिबों की सुगन्ध फैली हुई है । सतलुज नदी, सरसा नदी, चरणगंगा, इलाके के नाले आज भी गुरु साहिब की बाणी को लहरों के साथ अध्यात्मिक स्वर (सुर) में आवाज पैदा कर के वातावरण को मोहक बनाती है । हर ओर झूलते खालसे के निशान साहिब गुरु साहिब की रियासत की शान बढ़ाते है । किन्तु जिस रियासत (बिलासपुर) ने गुरु साहिब को अनंदपुर साहिब छोड़ने पर विवश किया था आज उस की सैकड़ों साल

पुरानी राजधानी बिलासपुर का नामों-निशान नहीं रहा और वह गुरु गोबिन्द सिंघ साहिब के नाम पर बने "गोबिन्द सागर" की सतह में पचास फुट नीचे समा चुकी है । अनंदपुर साहिब से गुरु साहिब को 'खदेड़ने' वाले परिवार का आज नामो निशान भी नहीं रहा । अनंदपुर साहिब पर आक्रमण करने वाले अजमेर चन्द और उसके पौत्र महाचंद को स्थानीय लोग भी बुरे राजा के रूप में याद करते है । भले ही अकाल पुरख ने दुष्ट राजाओं को सज़ा दी है और उन के शासन, रियासत राजधानी और वंश मिट चुके है लेकिन आज भी बिलासपुर के लोग सिक्खों के साथ मन-मिटाव रखते है ।

✡ ✡ ✡

अनंदपुर साहिब के गुरुद्वारे

इस समय अनंदपुर साहिब शहर दुनियां भर के नक्शे में है । यह शहर चण्डीगढ़ से ९७ किलोमीटर, रोपड़ से ४५ किलोमीटर, कीरतपुर साहिब से ९ किलोमीटर नंगल से २२ किलोमीटर दूर है । अनंदपुर साहिब दिल्ली से रेलवे पटरी से जुड़ा हुआ है । रेल दिल्ली-अम्बाला-सरहिन्द-रोपड़-कीरतपुर साहिब-अनंदपुर साहिब से होती हुई नंगल और ऊना तक जाती है । चण्डीगढ़ से रोपड़, बरासता कीरतपुर, पक्की सड़क है । अब खालसा की तीसरी शताब्दी के समारोहों के सम्बंध में कीरतपुर साहिब से अनंदपुर साहिब तक चार पटरी की दोहरी सड़क बन गई है ।

अनंदपुर साहिब गुरु साहिब के कदमों और शहीदों के रक्त से पवित्र हुई भूमि है । यह सारा नगर ही पवित्र है और इस में बसने और आने वालों कर कर्त्तव्य है कि इस भूमि को गुरु की नगरी और गुरु का घर समझ कर यहाँ पैर रखे । "चक्क नानकी" अनंदपुर साहिब में गुरु साहिब की याद में बहुत से गुरुद्वारे है :

गुरुद्वारा गुरु का महल :

'चक्क नानकी'-अनंदपुर साहिब की सब से पहली ईमारत "गुरु के महल" थी । यहाँ १६६५ में गुरु तेग़ बहादुर साहिब के रहने के लिये मकान बनाया गया था । यहाँ गुरु तेग़ बहादुर साहिब, गुरु गोबिन्द सिंघ साहिब, माता नानकी (माता गुरु तेग़ बहादुर साहिब) माता गुजरी, माता जीत कौर, माता सुन्दर कौर, माता साहिब कौर, चारों साहिबज़ादे रहते थे । 'चक्क नानकी' की पहली ईमारत होने से यह भी स्पष्ट हो जाता है कि इस नगर की नींव यहाँ ही रखी गई होगी । अब इस स्थान पर गुरुद्वारा "गुरु का महल" बना हुआ है । गुरुद्वारा भोरा साहिब, मंजी साहिब और दमदमा साहिब इसी ईमारत का ही हिस्सा हैं ।

गुरुद्वारा भोरा साहिब :

इस स्थान पर गुरु तेग़ बहादुर साहिब ने एक भोरा बनवाया हुआ था जहाँ बैठकर वह आराधना किया करते थे ।

गुरुद्वारा मंजी साहिब :

यह भी "गुरु के महल" के आगँन का एक हिस्सा था । इस जगह पर गुरु तेग़ बहादुर साहिब दीवान सजाया करते थे और संगतों को सम्बोधित हुआ करते थे । २५ मई १६७५ के दिन इसी स्थान पर पंडित किरपा राम और १६ अन्य कश्मीरी पंडितों ने गुरु साहिब के पास आकर प्रार्थना की थी, औरंगजेब के नये लगाये गये दुष्ट गर्वनर के अत्याचारों की कहानी सुनाई थी और गुरु साहिब से सहायता माँगी थी ।

गुरुद्वारा दमदमा साहिब :

यह स्थान भी "गुरु के महल" के आगँन का एक हिस्सा था । यहाँ से गुरु साहिब तख़्त की कारवाई चलाया करते थे । गुरु तेग़ बहादुर साहिब इस स्थान पर बैठ कर संगतों के प्रतिनिधियों को दर्शन दिया करते थे । इसी स्थान पर गुरु गोबिन्द सिंघ साहिब को गुरगद्दी दी गई थी । इसी स्थान पर मार्च १६९८ में मसंदों की परख हुई थी और दोषी मसंदों को सज़ा दी गई थी । इस के पास ही एक कुँआ है जिस के किनारे दोषी मसंदों को जलाया गया था ।

गुरुद्वारा सीसगंज :

यह स्थान चक्क नानकी की सीमा से बाहर है । बाद में यह अनंदपुर साहिब की सीमा का हिस्सा बना था । अब यह जगह शहर के लगभग बीच में है । इस स्थान पर गुरु गोबिन्द सिंघ साहिब ने १७ नवम्बर १६७५ के दिन गुरु तेग़ बहादुर साहिब जी के सीस का संस्कार किया था । ५-६ दिसम्बर १७०५ की रात को जब गुरु गोबिन्द सिंघ साहिब ने अनंदपुर छोड़ा तो वह इस स्थान पर गुरु तेग़ बहादुर साहिब की याद को ताज़ा कर के और भाई गुरबख़्श दास उदासी को इस की सेवा सम्भाल का भार सौंप कर चले थे ।

गुरुद्वारा अकाल बुंगा :

गुरु तेग़ बहादुर साहिब जी के सीस के संस्कार होने के बाद एकत्रित

संगतों को गुरु गोबिन्द सिंघ साहिब ने इस स्थान पर भाणा (परमात्मा की रज़ा) मानने, शक्तिशाली होने, धर्म की रक्षा करने और अत्याचारों के विरुद्ध लड़ने के लिये तैयार-बर-तैयार होने के लिये कहा था । यह स्थान गुरुद्वारा सीसगंज साहिब के ठीक सामने है ।

गुरुद्वारा मंजी साहिब (दुमालगढ़) साहिब :

यह गुरुद्वारा केसगढ़ साहिब के सामने उत्तर की ओर है । गुरु साहिब के समय यहाँ एक पुराना बरगद का वृक्ष था और आस-पास समतल खुली भूमि थी । इस स्थान पर गुरु साहिब साहिबज़ादों को व्यायाम और खेलें सिखाया करते थे । इसी स्थान पर साहिबज़ादों ने तलवार चलाने की शिक्षा ली थी । यहाँ गुरु साहिब नौजवानों और बच्चों में कुश्ती और अन्य मुकाबले करवाया करते थे । इसी जगह एक बार साहिबज़ादा ज़ोरावर सिंघ और (पालित) ज़ोरावर सिंघ (पुत्र नथू राम लोटे वासी बसी पठानाँ) में हुये कुश्ती के मुकाबले में (पालित) जोरावर सिंघ ने साहिबज़ादा जोरावर सिंघ को पछाड़ दिया था और गुरु साहिब ने कहा था कि (पालित) जोरावर सिंघ भी उन का अपना ही बेटा है । (पालित) जोरावर सिंघ साहिबज़ादा जोरावार सिंघ से केवल एक दिन बड़ा था । (यह पालित जोरावर सिंघ हमेशा ही गुरु साहिब के पास रहा था और अप्रैल १७०८ में चितौड़ में शहीद हुआ था) ।

२ नवंम्बर १७०३ के दिन अजमेर चन्द के सैनिकों ने अनंदपुर साहिब पर आक्रमण कर दिया । उस समय गुरु साहिब इसी जगह बरगद के नीचे बैठे थे । आप के साथ भाई उदय सिंघ, भाई हिम्मत सिंघ, भाई साहिब सिंघ 'नच्चणा' और साहिबज़ादा फतह सिंघ भी बैठे थे । उधर अनंदपुर के बाहर अजमेर चंद की सेना से टक्कर लेने के लिये भाई मान सिंघ निशानची के नेतृत्व में सिक्ख सैनिक डटे हुये थे । लड़ाई में भाई मान सिंघ घायल हो कर गिर पड़ा और साथ ही निशान साहिब भी टूट कर गिर पड़ा । जब गुरु साहिब को इस की सूचना मिली तो उन्होंने उसी समय अपनी छोटी दस्तार (केसकी) से एक फर्रा फाड़ा और दस्तार में लगा लिया । उन्हों ने ऐलान किया कि आगे से खालसे का नीला निशान साहिब कभी भी नहीं टूटेगा । गुरु साहिब को देख कर पास बैठे सिक्खों ने भी अपनी-

अपनी केसकियों से फर्रे फाड़ कर दस्तारों में सजा लिये । उन को देख कर साहिबज़ादा फतह सिंघ ने भी फर्रा सजा लिया । इस घटना से फर्रा (दुमाला) सजाने की प्रथा शुरू हो गई । इस घटना के कारण ही इस गुरुद्वारे को दुमाला साहिब या 'दुमालगढ़ साहिब' भी कहा जाता है ।

गुरुद्वारा शहीदी बाग़ :

किला अनंदगढ़ के ठीक सामने (गाँव लोदीपुर की सीमा में), केसगढ़ और अनंदगढ़ की पहाड़ी के नीचे की सड़क के किनारे पर, गुरुद्वारा शहीदी बाग़ है । यहाँ गुरु साहिब का बाग़ होता था । अनंदगढ़ साहिब के घिराव के समय यहाँ कई सिक्ख शहीद हुये थे । इस कारण इस का नाम शहीदी बाग़ प्रसिद्ध हो गया था । मौजूदा स्थिति में यह गुरुद्वारा २० वीं सदी के शुरू में बना है । इस स्थान पर भाई मंगल सिंघ (एक सेवामुक्त सैनिक) ने कई साल सेवा की थी । उन के समय यहाँ हर यात्री को लंगर मिला करता था । आजकल इस गुरुद्वारे पर निहंगों के एक दल का अधिकार है ।

गुरुद्वारा माता जीत कौर जी :

गुरु गोबिन्द सिंघ साहिब की पहली सुपत्नी माता जीत कौर जी का ५ दिसम्बर १७०० के दिन देहांत हो गया । उन का संस्कार उसी शाम को चरणगंगा के दूसरे किनारे गाँव अगंमपुर के बाहर किया गया । जिस जगह माता जी का संस्कार किया गया था वहाँ किसी ने 'देहरा माता जीत कौर जी' बना दिया था । बाद में वह भूमि नदी की बाढ़ ने बहा दी थी । बाद में इस स्थान के निकट गुरुद्वारा माता जीत कौर बनाया गया था । माता जीत कौर जी के अतिरिक्त चक्क नानकी-अनंदपुर के अन्य सभी वासियों का संस्कार भी इसी स्थान में हुआ करता था । सोढी परिवार के सस्कार भी यहाँ होते रहे थे ।

☆ ☆ ☆

अनंदपुर साहिब के किले

केसगढ़ साहिब :

अनंदपुर साहिब का सब से महत्त्वपूर्ण स्थान केसगढ़ साहिब है। केसगढ़ साहिब सिक्ख पंथ का तख़्त है। यह खालसा को प्रगट करने वाला स्थान भी है। यह गुरु साहिब का एक महत्वपूर्ण किला भी था।

केसगढ़ साहिब एक ऊँची पहाड़ी पर बना हुआ है। किसी समय यह पहाड़ी वर्तमान ऊचाई से १०-१५ फुट अधिक थी और इस के साथ ही एक अन्य पहाड़ी भी थी। उस पहाड़ी पर सीस-भेंट कौतुक वाले दिन अलग तम्बू लगाया गया था। इसी कारण उसको "तम्बू वाली पहाड़ी" भी कहते थे। यह पहाड़ी अब घुल कर अदृश्य हो चुकी है। केसगढ़ साहिब से अनंदगढ़ तक ऊँचा पहाड़ था। १९७३ में इस पहाड़ को काट कर सड़क बना दी गई थी। उस के बाद भी पच्चीस वर्षों में इस सड़क के आस-पास काफी बदलाव लाये गये है। केसगढ़ के सामने बाग़ के साथ वाली खुली भूमि पर अब लंगर की ईमारत बन चुकी है। उस के पीछे अनंदगढ़ किले तक चौड़ी सड़क बन चुकी है। केसगढ़ साहिब का आगे का हिस्सा भी बदल चुका है और नीचे वाली मंजिल वाली सराय की भी मुरम्मत हो रही है। इस से इस का रूप बदल गया है। आशा है कि अप्रैल १९९९ तक यह एक नऐ रूप में तैयार हो चुका होगा।

केसगढ़ साहिब पर ही खालसा प्रगट करने के दिन दीवान सजाया गया था और हज़ारों दर्शनार्थी इस मौके पर पहुँचे थे। इस से पता लगता है कि केसगढ़ साहिब से अनंदपुर साहिब तक पहाड़ियों और आस-पास की पहाड़ियों के बीच कितनी खुली जगह थी। वह सारी संगत वास्तव में इन पहाड़ियों के बीच ही बैठी होगी।

इस स्थान का नाम केसगढ़ रखे जाने के सम्बंध में भी तीन विचार

है। एक विचार के अनुसार यहाँ गुरु साहिब ने केशों में अमृत के छींटे मारे थे, इस कारण इस को केसगढ़ कहते है (पंडित तारा सिंघ नरोतम)। दूसरा विचार है कि यह सिक्ख दर्शन के नियमों ('केस' का फारसी में अर्थः 'परमात्मा के नियम' भी है) का केन्द्र था। इस कारण भी इस को केसगढ़ कहा जाता है (भाई नंद लाल)। मेरे विचार में 'केसगढ़' का अर्थ है वह किला जहाँ केस (नियम, दर्शन) सुरक्षित किया गया था। केसगढ़ में 'खालसा' सुरक्षित किया गया था। 'खंडे का अमृत' उस सुरक्षा की गारंटी है।

केसगढ़ साहिब किला १६९९ में तैयार हुआ था। इस से पहले इन ऊँची पहाड़ियों पर दीवान सजाये जाते थे। अनंदपुर साहिब में १७०० से १७०५ तक कई युद्ध हुये और अन्य सभी किलों पर आक्रमण हुये किन्तु केसगढ़ साहिब एक ऐसा सुरक्षित किला था कि इस की ओर आने से पहले अगंमगढ़-होलगढ़, लोहगढ़, फतहगढ़ और तारागढ़ सभी किलों को जीतना ज़रुरी होता था। इस तरह का समय अनंदपुर साहिब के इतिहास में कभी भी नहीं आया था। केवल ६ दिसम्बर १७०५ के दिन गुरु साहिब द्वारा से किला खाली किये जाने के बाद ही इस किले में पहाड़ी सेना ने प्रवेश किया और उन्हों ने इस को तोड़ कर समतल कर दिया था।

पँजाब पर बंदा सिंघ बहादुर का अधिकार होने के बाद अनंदपुर साहिब में सिक्खों का फिर आना आरम्भ हो गया। इस के बाद भी एक बार फिर अत्याचारों का दौर चला। उस समय भी सिक्ख कई साल अनंदपुर साहिब में न रह सके। किन्तु जब मिसलों ने पजांब पर अधिकार कर लिया तो सिक्खों के लिये अनंदपुर साहिब में समस्यायें समाप्त हो गई। १७५५ से १८१२ तक सिक्खों पर किसी आक्रमण के सम्बंध में इतिहास में कोई विवरण नहीं मिलता। इस समय के दौरान बाबा बघेल सिंघ लाल किला दिल्ली पर खालसाई निशान साहिब लहराने और दिल्ली के गुरुद्वारे बनाने के बाद अनंदपुर साहिब आये और उन्हों ने यहाँ के गुरुद्वारों की सुध ली थी। उन्हों ने गुरुद्वारा सीसगंज और केसगढ़ साहिब की सेवा की। बाद में पटियाला के राजाओं करम सिंघ और नरिन्दर सिंघ ने भी अनंदपुर साहिब के गुरुद्वारों की सेवा सम्भाल में हिस्सा लिया। उन्हों ने मुसाफिरों

के रहने के लिये एक बुंगा और कई कमरें बनवाये । १८१२ में अजमेर चंद के पोते महाँचंद के अनंदपुर साहिब पर आक्रमण में सिक्खों की जीत हुई । इस जीत ने, लाहौर में महाराजा रणजीत सिंघ के शासन तथा कपूरथला, पटियाला, नाभा, जींद और कैथल रियासतों में सिक्खों के शासन ने अनंदपुर साहिब को सब से अधिक सुरक्षित स्थान बना दिया ।

१८१५ के बाद अनंदपुर साहिब में रौनक बढ़ने लगी । कई सिक्ख यहाँ सेवा करने लगे । केसगढ़ में ग्रंथी की सेवा करने वालों में भाई करम सिंघ, बाबा खड़क सिंघ, भाई बुघ सिंघ, बाबा पूरण सिंघ और भाई अमर सिंघ के नामों का विवर्ण इतिहास के कुछ स्रोतों में मिल जाता है । भाई अमर सिंघ का देहान्त १९४८ में हो गया । १९ वीं सदी के आरम्भ से गुरुद्वारा सुधार लहर (१९२०-२५) तक लगभग १०० साल केसगढ़ साहिब की सेवा सम्भाल केवल ग्रंथी ही करता था । बाद में काम बढ़ने के कारण एक मुख्य ग्रंथी और कुछ ग्रंथी भी रखे गये । अकाली लहर के बाद अकाल तख़्त साहिब के नमूने पर केसगढ़ साहिब में भी "जत्थेदार" ही मुख्य सेवादार बन गया और मुख्य ग्रंथी स्थान दूसरे नम्बर पर हो गया । "जत्थेदार" की सेवा करने वालों में ज्ञानी रेशम सिंघ, मास्टर अजीत सिंघ, ज्ञानी फौजा सिंघ, ज्ञानी बचित्र सिंघ, ज्ञानी प्रताप सिंघ मल्लेवाल, जत्थेदार बीर सिंघ, ज्ञानी शरम सिंघ, ज्ञानी मग्घर सिंघ, जत्थेदार गुरदियाल सिंघ अजनोहा, ज्ञानी साधू सिंघ भौरा, जत्थेदार हरचरण सिंघ महालों, भाई शविदंर सिंघ (खाड़कू दौर में लगभग एक साल के लिये), भाई बलबीर सिंघ और भाई मनजीत सिंघ (प्रो:) शामिल है ।

केसगढ़ साहिब सिक्ख पंथ में विशेष स्थान रखता है । यहाँ दसवें नानक गुरु गोबिन्द सिंघ साहिब ने सीस-भेंट कौतुक किया, खंडे का अमृत शुरू किया और खालसा प्रगट किया । इस स्थान के लिये राजाओं महाराजाओं और अमीरों ने वार्षिक भेंट नीयत की हुई थी । बाबा बघेल सिंघ ने गांव बड्डों (ज़िला होशियारपुर) की आधी आमदनी (लगभग ११५० रूपये वार्षिक) केसगढ़ साहिब के नाम लगाया हुआ था । स: चड़त सिंघ (डलेवालीया मिसल) ने गांव मोनेवाल के १०० (एवं एक और गांव के ७५ रूपयें) केसगढ़ साहिब के नाम लगाये हुये थे । रियासत पटियाला,

कलसीया और नाभा के भी कुछ वार्षिक रूपये तख़्त साहिब के नाम लगे हुये थे । तख़्त केसगढ़ साहिब के साथ ३२ घुमा (एक एकड़ के दो घुमा होते है) ज़मीन थी । इसी तरह अनंदपुर साहिब के अन्य गुरुद्वारों के नाम भी वार्षिक रकम पक्की लगी हुई थी ।

केसगढ़ साहिब में गुरु साहिब के शस्त्र :

केसगढ़ साहिब के मुख्य हाल में गुरु ग्रंथ साहिब का प्रकाश किया हुआ है । इसी हाल के बीच एक अलग चारदीवारी (कमरानुमा) में गुरु गोबिन्द सिंघ साहिब और कुछ सिक्ख शहीदों के शस्त्र पड़े हुये है । इस में छह शस्त्र भाई गुरबख्श सिंघ (भाई राम कुंवर, बाबा बुड्ढा परिवार के उत्तराधिकारी) नंदेड़ से लाये थे तथा अन्य छह शस्त्र लन्दन से १९६६ में आये थे । यह बारह शस्त्र निम्नलिखित है :

१. **खंडा :** यह वही खंडा है जिस के साथ सीस भेंट कौतुक के दिन गुरु गोबिन्द सिंघ साहिब ने 'खंडे का अमृत' तैयार कर के पहले पाँच सिक्खों (पाँच प्यारों) को पिलाया था । यह खंडा पहले कई वर्षों तक सोढी परिवार के पास रहा था किन्तु बाद में उन्हों ने केसगढ़ साहिब को भेंट कर दिया था । इस खंडे को १९४२ में एक बार अकाल तख़्त साहिब (अमृतसर) ले जाया गया था और वहाँ इसके साथ अमृत तैयार कर के पिलाया गया था । खंडे की महानता को दृष्टि में रख कर इस को १९४२ के बाद फिर कभी भी व्यवहार में नहीं लाया गया ।

२. **कटार :** यह गुरु साहिब का कमरबंद का शस्त्र था । इस को हाथों-हाथ लड़ाई में प्रयोग किया जाता है । यह संजोयों को तोड़ने में सहायता करता है । यदि हाथों-हाथ लड़ाई में इस से वार हो जाये तो दुश्मन बच नहीं सकता ।

३. **सैफ़ :** यह दो-धार वाला शस्त्र है । कुछ स्रोतों के अनुसार यह सैफ़ मुग़ल बादशाह बहादुर शाह ने गुरु साहिब को भेंट की थी । कहा जाता है कि इस सैफ़ को हज़रत मुहम्मद साहिब के दामाद (बीबी फ़ातिमा के पति) हज़रत अली, हसन और हुसैन (जो करबला की लड़ाई में शहीद हो गये थे) ने भी प्रयोग किया था । इस के बाद

यह सैफ़ इस्लामी ख़लीफ़ों के पास भी रही थी । ख़लीफ़ों ने औरंगजेब की इस्लाम सेवा को ध्यान में रखते हुये यह सैफ़ उसे भेंट कर दी थी । औरंगजेब से यह बहादुर शाह तक पहुँची और उस ने गुरु साहिब को भेंट की थी । इस हिसाब से इस सैफ़ की उम्र १३०० साल में भी अधिक है ।

४. **बन्दूक :** यह बन्दूक लाहौर के एक सिक्ख ने गुरु गोबिन्द सिंघ साहिब को भेंट की थी । गुरु साहिब ने गुरु तेग़ बहादुर साहिब की शहीदी के बाद सिक्खों को हुक्मनामे भेजे थे कि वह जब भी ''चक्क नानकी'' और ''अनंदपुर साहिब'' आये तो अपने साथ अच्छे घोड़े, शस्त्र तथा अच्छी किताबें ले कर आये । इस हुक्मनामे के प्रभाव के कारण बहुत से शस्त्र अनंदपुर साहिब में पहुँचा करते थे । गुरु साहिब ने स्वंय भी किला लोहगढ़ में शस्त्र बनाने के लिये एक कारखाना लगाया था । भाई राम सिंघ सिकलीगर इस कारखाने का इंर्चाज था ।

५. **नागनी बरछा :** इस बरछे (भाले) का आगे का भाग नागिन जैसी आकृति वाला, बल खाता हुआ, बना हुआ है । इस कारण इस का नाम नागनी-बरछा था । इस का वार इतना ज़बरदस्त होता था कि इस का मारा नागिन के डंक मारे जाने की तरह पानी भी नहीं मांगता । इस कारण इसे नागनी बरछा कहा जाता था । यह गुरु साहिब का अपना बरछा था । पहली सितम्बर १७०० के दिन अजमेर चंद ने पहाड़ी राजाओं की सेना ले कर अनंदपुर साहिब पर आक्रमण करना था । उस की सेना का नेतृत्व एक मदमस्त हाथी ने करना था । हाथी के माथे पर लौह-तवीयां बंधी हुई थी । गुरु साहिब ने अपना नागनी बरछा भाई बचित्र सिंघ को दे कर उसे मदमस्त हाथी का सामना काने के लिये भेजा । भाई बचित्र सिंघ ने लौहगढ़ किले के दरवाजे से कुछ दूरी पर आ रहे हाथी की ओर घोड़ा दौड़ा कर इस नागनी बरछे से इतना जबरदस्त वार किया कि वह तवीयां में छेद करता हाथी के माथे में फंस गया । साथ ही बचित्र सिंघ ने बरछे को एक दम वापिस खींच लिया । हाथी चिंघारता हुआ पीछे की ओर मुड़ा और पहाड़ी सैनिकों को कुचलता हुआ भाग गया । भाई बचित्र सिंघ ने लड़ाई के बाद यह बरछा फिर गुरु साहिब को लौटा दिया ।

६. **करपा बरछा :** हाथी की हथेली जैसी चौड़ी आकृति होने के कारण इस को करपा बरछा कहा जाता है । यह बरछा भी गुरु साहिब का अपना था । इस का प्रयोग कम-से-कम दो ऐतिहासिक अवसरों पर हुआ था । १६७३ में गुरु साहिब की मंगनी माता जीत कौर के साथ हुई थी । माता जीत कौर जी के पिता की इच्छा थी कि गुरु साहिब बारात ले कर लाहौर आये । १६७५ में गुरु तेग़ बहादुर साहिब शहीद हो गये । इस हालत में शादी का सवाल आगे पड़ गया । जब १६७७ में शादी की बात फिर चली तो गुरु साहिब ने हरिजस राय सुभिक्खी की बारात लाहौर ले जाने की इच्छा को पूरा करने के लिये अनंदपुर साहिब से ११ किलोमीटर "गुरु का लाहौर" नाम का नया नगर बसाने का फ़ैसला किया । नया नगर बसाते समय वहाँ पानी की कमी नज़र आयी तो गुरु साहिब ने इस बरछे से पानी का झरना बहाया था । प्रथा के अनुसार गुरु साहिब ने इस बरछे के वार से धरती में तीन निशान लगाये । इस से पानी की तीन धारायें फूट निकली ।

इस करपा बरछे का नाम ऐतिहास में एक अन्य घटना के कारण भी आता है । पहली सितम्बर १७०० के दिन लोहगढ़ पर आक्रमणकर्ता पहाड़ी सेना का नेता केसरी चंद (अजमेर चंछ बिलासपुरी का मामा) था । वह चलते समय यह कह कर चला था कि 'यदि मैं आज की लड़ाई में हार गया तो लौट कर अपना मुँह नहीं दिखाऊगा । भाई उदय सिंघ ने गुरु साहिब से इस का सामना करने की आज्ञा ली । गुरु साहिब ने उसे अपना करपा बरछा उसे सौंप दिया था । इस दिन पहाड़ी सेना के आगे चल रहे मदमस्त हाथी को भाई बचित्र सिंघ ने मोड़ा । इस के बाद भाई उदय सिंघ राजा केसरी चंद के पास जा पहुँचा और फुर्ती से उस का सिर काट लिया तथा इस इस भाले पर रख कर गुरु साहिब के पास अनंदगढ़ किले में पहुँच कर उन के चरणों पर भेंट किया । पहाड़ी सैनिकों ने केसरी चंद का सर ले जा रहे भाई उदय सिंघ पर कई तीर चलाये जिन में से कुछ बरछे को भी लगे । वह निशान अभी भी इस बरछे पर लगे हुये है । इसी तरह गोली का भी एक आध निशान भी नज़र आता है ।

इंग्लैण्ड से आये शस्त्र :

७. बड़ा बरछा । ८. छोटा बरछा । ९. श्मशीर-इ-तेग़ । १० दाहे-आहनी । ११. सुनहरी चक्र । १२. गेंडें की खाल (चमड़ी) से बनी हुई ढ़ाल ।

केसगढ़ साहिब तख़्त भी था और किला भी था । इस किले के अतिरिक्त गुरु साहिब की ओर से बनाये गये अन्य किले निम्नलिखित थे । आजकल इस किलों के स्थान पर गुरुद्वारे बने हुये है ।

किला अनंदगढ़ साहिब :

गुरु गोबिन्द सिंघ साहिब ने सब से पहले यही किला बनवाया था । यह किला ३१ मार्च १६८९ के दिन बनना शुरू हुआ था और कुछ ही सप्ताह में सारी संगत ने कार-सेना कर के तैयार कर दिया था । कुछ समय बाद गुरु साहिब यहाँ रहने भी लगे थे । किला अनंदगढ़ साहिब की पुरानी ईमारत को अजमेर चंद की सेंनां नें १७०५-०६ में ही तोड़ कर ढेर कर दिया था । फिर सिक्खों ने कई साल बाद यहां गुरद्वारा बनाया था । इस की पहली कार-सेना १९१२ में हुई थी । नई ईमारत बनाने की शुरूआत १५ नवम्बर १९३३ के दिन की गई । दिसम्बर १९३४ तक यह ईमारत तैयार हो चुकी थी । इस के बाद भी इस के ऊपर वाले भाग में काम होता रहा और इस की कार सेवा १९६० तक चलती रही । फिर १९७३ में गुरु गोबिन्द सिंघ मार्ग के समय भी इस की मुरम्मत हुई तथा नया निर्माण भी होता रहा । १९८५ के बाद अनंदगढ़ किले की पहाड़ी की ओर लंगर और सराय की ईमारत बनाई गई । इस से पुरानी ईमारत की कुछ बची निशानियाँ भी समाप्त हो चुकी हैं ।

किला अनंदगढ़ साहिब की बाउली स. जस्सा सिंघ आहलुवालीया ने बनवाई थी । इस बाउली का कुआँ गुरु साहिब के समय का था । इस बाउली की कार सेवा भी डेढ़ सौ साल तक नहीं हो सकी थी । आखिर १९५० के आसपास इस परियोजना को शुरू किया गया ।

किला अनंदगढ़ साहिब किला लोहगढ़ के बाद दूसरा बड़ा केन्द्र था । किला अनंदगढ़ शत्रु के आक्रमण की दृष्टि से सब से अधिक सुरक्षित स्थान था । इस के एक ओर नदी तथा दूसरी ओर पहाड़ की दीवार थी । ५- ६ दिसम्बर १७०५ की रात को जब गुरु साहिब ने अनंदपुर साहिब छोड़ा तो

वह यहीं से ही कीरतपुर साहिब की ओर चले थे । लगभग १५ साल तक गुरु साहिब इस किले में ही रहे थे । आप का परिवार चक्क नानकी "गुरु के महल" में ही रहता था किंतु आप सैनिकों की निगरानी करते प्रायः यही रहा करते थे । अनंदगढ़ साहिब सैनिक दृष्टि से विशेष केन्द्र था तथा शस्त्र और गोला बारूद सारा यहीं पर जमा किया जाता था । शत्रुओं की सेना ने इस किले पर कई बार आक्रमण किया किंतु उन्हें हर बार मुँह की खानी पड़ी ।

केसगढ़ साहिब की तरह अनंदगढ़ साहिब के नाम पर भी बंधी हुई वार्षिक आमदन होती थी । अलग-अलग सिक्ख रियासतों ने गांवों का कर तथा अन्य रकम अनंदगढ़ साहिब के नाम लगाई हुई थी । एक अंदाजे के अनुसार अनंदगढ़ साहिब की वार्षिक आमदनी १६०० रुपये थी । यह रकम १९वीं सदी और २०वीं सदी के शुरूआत में बहुत बड़ी रकम होती थी । अनंदगढ़ की कुल भूमि १२५ घुमा थी । इस समय किला अनंदगढ़ साहिब के गुरुद्वारे के साथ एक बहुत बड़ी सराय बनी हुई है । यहाँ लगभग ढ़ाई सौ कमरे यात्रियों के लिये बने हुये है । इन में से ५० से अधिक कमरों के साथ स्नान-घर बने हुये है । इन का दर्शनी दरवाज़ा, जो पहली बार १९३३ में बना था, अब और भी सजाया जा चुका है । यहाँ से १२५ सीढ़ियां चढ़ कर किले के ऊपर तक पहुँचा जाता है । किला अनंदगढ़ की ओर से केसगढ़ साहिब से पक्की सड़क भी आती है तथा मोटरें गुरुद्वारे की सीढ़ियों तक पहुँचती है । इस किले की पहाड़ी कच्ची है । इस को घुलने से रोकने के लिये २०-२५ लाख ईंटों के अतिरिक्त बहुत सारा सीमेंट तथा लोहा डाल कर नींव को मज़बूत बनाया गया है । गुरुद्वारे का गुबन्द भी लोहे और गिट्टी का बना हुआ है । गुंबद के ऊपर एक सोने का कलस भी लगा हुआ है ।

किला लोहगढ़ साहिब :

गुरु गोबिन्द सिंघ साहिब के बनवाये किलों में लोहगढ़ भी विशेष महत्त्व रखता था । यह किला 'चक्क नानकी' के चरण गंगा नाले के किनारे पर था । किला लोहगढ़, किला अनंदगढ़ के बाद दूसरे नम्बर का काफ़ी बड़ा किला था । भाई राम सिंघ सिकलीगर इस कारखाने के इंचार्ज थे । लोहगढ़

के किले का द्वार बहुत मज़बूत था । पहाड़ी राजाओं ने अनंदपुर साहिब के सभी किलों पर आक्रमण किये थे तथा हर जगह पर हार खाई थी किन्तु लोहगढ़ पर वह आक्रमण करने से भी झिझकते थे क्योंकि इस का दरवाज़ा तोड़ना उन के वश में नही था । २९ से ३१ अगस्त १७०० तक जब तीन दिन अन्य किलों (तारागढ़, फतहिगढ़ और अगंमगढ़) पर आक्रमण करके पहाड़ी सेना हार गई तो उन्हों ने चौथे दिन, पहली सितम्बर १७०० के दिन, किला लोहगढ़ पर हमला करने के लिये मदमस्त हाथी को आगे किया था । इस मदमसत हाथी को किला लोहगढ़ के दरवाज़े के पास भाई बचित्र सिंघ ने नागनी बरछा मार कर मोड़ा था । इसी जगह पर ही भाई उदय सिंघ ने राजा केसरी चंद का सिर काटा था । इसी दिन ही भाई मनी सिंघ का चाचा भाई आलम सिंघ (पुत्र भाई दरीया), भाई सुक्खा सिंघ (पुत्र भाई राय सिंघ), भाई खुशहाल सिंघ (पुत्र भाई मक्खन शाह लुबाणा) शहीद हुये और भाई मनी सिंघ गंम्भीर रूप से घायल हुये थे। यही पर इन के साथ भाई शेर सिंघ और भाई नाहर सिंघ (दोनों चमकौर के शहीद) तथा भाई आलम सिंघ 'नच्चणा' भी डट कर लड़े थे । दिसम्बर १७०५ और जनवरी १७०६ के बीच पहाड़ी सेना ने इस किले को भी तोड़ दिया था । इस की कुछ बची निशानियों को १९८५ के बाद यहाँ गुरद्वारा बनाते समय समाप्त कर दिया गया था ।

किला होलगढ़ तथा अगंमगढ़ साहिब

गुरद्वारा किला होलगढ़ गांव अगंमपुरा की सीमा में बना हुआ है । यह अनंदपुर साहिब से लगभग एक किलोमीटर दूर है । इतिहास के कुछ स्रोतों के अनुसार जिस जगह गुरद्वारा किला होलगढ़ है वहाँ किला अगंमगढ़ था और किला होलगढ़ चरण गंगा के इस ओर होता था । किला होलगढ़ का नाम होला महल्ला से भी सम्बंधित है । 'होला महल्ला' को गुरु साहिब ने होली के अगले दिन मनाना शुरू किया था । उन दिनों होली के दिन हिन्दू एक दूसरे पर रंग डाल कर कपड़े खराब किया करते थे । सिक्खों को इस बेकार प्रथा से हटाने के लिये गुरु साहिब ने होला महल्ला शुरू किया था । इस दिन अनंदगढ़ से एक जलूस होलगढ़ जाया करता था । जलूस के होलगढ़ पहुँचने के बाद वहाँ घुड़सवारी, नेज़ाबाजी, तलवारबाज़ी,

गतका तथा कुश्ती के मुकाबले हुआ करते थे । इस से यह भी पता लगता है कि होलगढ़ किले के आगे चरन गंगा का बड़ा खुला मैदान था । होलगढ़ और अगंमगढ़ किले के सम्बंध में भट्टों की बहीयों और "गुरु की साखीयों" में साफ-साफ शब्दों में यह लिखा मिलता है कि दोनों किले मौजूद थे । पहाड़ी सैनिकों ने किला अगंमगढ़ पर आक्रमण किया था क्यों कि यह चरन गंगा के दूसरी ओर गांव अगंमगढ़ में था । चरन गंगा पार कर के इस ओर किला 'होलगढ़' पर आक्रमण करने का मतलब चक्क नानकी और अनंदपुर साहिब में पहुँच जाना था तथा आगे केसगढ़ पर आक्रमण किये जा सकने की आशा भी हो सकती थी । इसलिये, किला होलगढ़ चरन गंगा के इस ओर और किला अगंमगढ़ चरन गंगा के पार गांव अगंमगढ़ में होना ठीक लगता है । किला होलगढ़ वाली भूमि पर कोई गुरद्वारा नहीं है तथा किला अगंमगढ़ के स्थान पर बने गुरद्वारे का नाम "किला होलगढ़ साहिब" है । अगस्त १७०० की चार रोजा लड़ाई के तीसरे दिन ३१ अगस्त को पहाड़ी सेना ने किला अगंमगढ़ पर भी आक्रमण किया था । इस लड़ाई में भाई मनी सिंघ का चचेरा भाई भाई बाघ सिंघ (पुत्र भाई राय सिंघ), दीवान घरबारा सिंघ का भाई, भाई घरबारा सिंघ (पुत्र भाई नानू सिंघ दिलवाली) शहीद हुये थे ।

किला फतहगढ़ साहिब

गुरु गोबिन्द सिंघ साहिब ने अनंदपुर साहिब, चक्क नानकी की सुरक्षा के लिये एक और विशेष किला चक्क नानकी गांव के पास सहोटा गांव में भी बनवाया था । जब यह किला बन रहा था तो साहिबजादा फतह सिंघ का जन्म उन्हीं दिनों ही हुआ था । आप ने इस का नाम फतहगढ़ रखा था । यह किला गंगूवाल-गुरु का लाहौर-नंगल तथा इस ज़ोन की ओर से आ रही सेना को रोकने में सहायता करता था । इस किले का इंचार्ज भाई मनी सिंघ का पुत्र भाई भगवान सिंघ था । ३० अगस्त १७०० के दिन पहाड़ी सेना ने इस किले पर भी हमला किया तथा हार खाई थी । इस किले पर हुये आक्रमण में भाई भगवान सिंघ, भाई जवाहर सिंघ (पुत्र भाई लक्खी राय शहीद हुये थे) । आज किला फतहगढ़ वाली जगह पर गुरद्वारा फतहगढ़ बना हुआ है ।

किला तारागढ़ साहिब

यह किला अनंदपुर साहिब से लगभग पाँच किलोमीटर दूर गांव तारापुर की सीमा में था। इस किले को बनाने का उद्देश्य बिलासपुर रियासत की ओर से होने वाले आक्रमणों को रोकना था। इस किले की दीवारों पर चढ़ कर कोट कहिलूर पर नज़र रखी जा सकती थी। इस किले के बनने पर पहाड़ी राजा अजमेर चंद को बहुत दुःख हुआ था। उस ने कई बार इस किले पर अधिकार करने चाहा था किंतु वह सफल नहीं हो सका था। अगस्त १७०० के चार दिन के हमले में २९ अगस्त का सब से पहला आक्रमण इस किले पर ही हुआ था। इस जगह पचास सिक्खों का एक दल रहा करता था। जब पहाड़ी सेना ने आक्रमण किया तो साहिबज़ादा अजीत सिंघ के नेतृत्व में सिक्खों ने, संख्या में थोड़े होने पर भी, डट कर सामना किया तथा साथ ही गुरु साहिब ने और सेना भेजने के लिये संदेश भी भेज दिया। गुरु साहिब ने अनंदपुर से भाई उदय सिंघ के नेतृत्व में सवा सौ सिंघों का एक दल भेजा। इस लड़ाई में बहुत सारे पहाड़ी सैनिक मारे गये। एक पहर की लड़ाई कें बाद अजमेर चंद मैदान छोड़ कर भाग गया था। इस लड़ाई में भाई कल्याण सिंघ (पुत्र शहीद भाई दयाल दास), भाई संगत सिंघ (भाई भाई फेरू), भाई ईश्वर सिंघ शहीद हो गये। तारागढ़ किला के स्थान पर १९८५ तक कोई गुरद्वारा नहीं था। यहाँ केवल एक बाउली थी। अब कार सेवा वालों ने यहाँ एक शानदार गुरद्वारा बना दिया है।

☆ ☆ ☆

गुरु का लौहार के गुरद्वारे

अनंदपुर साहिब से ग्यारह किलोमीटर और गंगूवाल से आठ किलोमीटर दूर "गुरु का लाहौर" बसा हुआ है। इस की नींव १६७७ में गुरु गोबिन्द सिंघ साहिब ने रखी थी। गुरु साहिब का विवाह इस जगह से २१ जून १६७७ के दिन हुआ था। इस जगह पर चार गुरद्वारे है :

गुरद्वारा त्रिवैनी साहिब

एक प्रथा के अनुसार "गुरु का लाहौर" में पानी की कमी को दूर करने के लिये गुरु साहिब ने इस जगह 'करपा बरछा' मार कर पानी की तीन धारायें बहाई थी। उन तीनों झरनों का पानी एक सरोवर में गिरता है। इस जगह पर एक ख़ूबसूरत गुरद्वारा बना हुआ है।

गुरद्वारा पौड़ साहिब

यह गुरद्वारा एक झरने पर बना हुआ है। एक प्रथा के अनुसार यह झरना गुरु साहिब के घोड़े के टापों से फूटा था। इस झरने का पानी खारा है।

गुरद्वारा सिहरा साहिब

एक प्रथा के अनुसार गुरु साहिब ने गुरु का लाहौर में पहुँचने से पहले यहाँ सिहरा बाँधा था। यह जगह गुरु का लाहौर से कुछ दूर गांव बस्सी में है।

गुरद्वारा अनंद कारज साहिब

इस जगह पर गुरु गोबिन्द सिंघ साहिब की शादी माता जीतो जी (जीत कौर) के साथ हुई थी। उस याद को सदा के लिये कायम रखने के लिये यहाँ गुरद्वारा बनाया गया है। हर साल बसंत पंचमी के दिन यहाँ शादी की बारात जैसा जलूस निकलता है जो गुरद्वारा सिहरा साहिब से गुरु का लाहौर तक जाता है। किंतु गुरु साहिब का विंवाह बसंत पंचती के दिन नहीं बल्कि आषाढ़ शुक्ल एक १७३४ (२१ जून १६७७) के दिन हुआ था। बसंत पंचमी के दिन यह त्यौहार मनाने की रीति बाद में शुरू हुई।

कीरतपुर साहिब के गुरद्वारे

चड़ीगढ़-रोपड़ की ओर से अनंदपुर साहिब जाते रास्ते में बड़ा कस्बा कीरतपुर साहिब आता है । कीरतपुर साहिब गांव की नींव बाबा श्री चंद ने २३ अप्रैल १६२४ (एक श्रोत के अनुसार १ मई १६२६) के दिन बाउली का टक लगा कर रखी थी । कीरतपुर नगर में चार गांव (जीऊवाल, कलिआनपुर, भटोलीया और भग्गूवाल) की भूमि के हिस्से शामिल है । गुरु हरगोबिन्द साहिब यहाँ मई १६३५ में आ कर रहने लगे थे । सातवें और आठवें नानक जी का जन्म इसी नगर में हुआ था । गुरु तेग़ बहादुर साहिब भी कुछ समय यहाँ रहे थे । गुरु गोबिन्द साहिब यहाँ कई बार आये थे । अपनी यात्राओं के समय गुरु नानक साहिब भी एक बार यहाँ पर आये थे । कीरतपुर साहिब में छः गुरु साहिबान की यादगारें कायम हैं । इस के अतिरिक्त बाबा श्री चंद (पुत्र गुरु नानक साहिब), बाबा गुरदिता (पुत्र गुरु हरिगोबिन्द साहिब और पिता गुरु हरिराय साहिब) और बीबी रुप कौर (पुत्री गुरु हरिराय साहिब) की यादगारें भी बनी हुई है ।

गुरुद्वारा चरन कंवल

यह गुरुद्वारा गुरु नानक साहिब की याद में बना हुआ है । गुरु साहिब अपनी यात्राओं के दौरान भाई मरदाना के साथ यहाँ से गुज़रे थे । उस समय अभी कीरतपुर साहिब की नींव नहीं रखी गई थी । जब गुरु साहिब यहाँ ठहरे तो पास एक पहाड़ी पर रहते मुसलमान साईं बुड्ढण शाह को गुरु साहिब के आने का पता लगा तो वह दूध ले कर गुरु साहिब की सेवा में उपस्थित हुआ । साईं बुड्ढण शाह की गद्दी शहर से बाहर एक पहाड़ी के ऊपर है तथा उस के मजार के मुखियों ने यह प्रचार किया हुआ है कि जो सिक्ख कीरतपुर साहिब आकर साईं बुड्ढण शाह की मजार पर नहीं जाता उस की यात्रा सफल नहीं होती । यह ग़ल्त प्रचार है । सिक्ख किसी गैर सिक्ख धर्म स्थान, कबर, मज़ार या समाधि पर माथा नहीं टेकता । इस कारण साईं बुड्ढण शाह की यादगार पर जाना सिक्ख के लिये गल्त है । वैसे जानकारी या दिलचस्पी के लिये कोई भी जगह देखना गल्त नहीं है ।

गुरुद्वारा शीश महल :

१६२४ में कीरतपुर की नींव रखने के बाद सब से पहली ईमारत यहीं बनी थी । यह बाबा गुरदित्ता जी का घर था । मई १६३५ में कीरतपुर साहिब आने के बाद गुरु हरिगोबिन्द साहिब भी यहीं रहते थे । इस लिये १६२४ से, विशेषकर १६३५ से, १६६३ तक यह स्थान गुरु परिवार का घर था। गुरु हरि राय साहिब (१६ जनवरी १६३० के दिन) और गुरु हरि कृष्ण साहिब (२० जुलाई १६५२ के दिन) का जन्म इसी जगह पर हुआ था। राम राय और बीबी रूप कौर (बेटा तथा बेटी गुरु हरि राय साहिब) का जन्म भी इसी स्थान पर हुआ था । गुरु तेग़ बहादुर साहिब के चक्क नानकी चले जाने के बाद इस की ईमारत टुटती गई और धीरे-धीरे इस पर रहने वालों ने अधिकार कर लिया । काफी देर के बाद इस स्थान पर यह गुरुद्वारा बनाया गया । इस की मौजूदा ईमारत कुछ साल पहले बनाई गई थी ।

गुरुद्वारा तख़्त साहिब :

गुरु हरिगोबिन्द साहिब ने कीरतपुर साहिब आने के बाद इस स्थान पर अपना तख़्त कायम किया था तथा किला बनवाया था । वह अकाल तख़्त साहिब की कार्यवाही इस स्थान से चलाया करते थे । इसी स्थान पर गुरु हरि राय साहिब और गुरु हरिकृष्ण साहिब की गद्दी नशीनी हुई थी । बाहर की रियासतों से आये राजा महाराजा तथा अमीर इसी स्थान पर आ कर गुरु साहिब के दर्शन करते थे ।

गुरुद्वारा दमदमा साहिब :

इस जगह पर गुरु हरि राय साहिब बाहर से आये दर्शनीयों को दर्शन दिया करते थे । इस के पास ही गुरु का लंगर भी था जिसमें तरह-तरह के भोजन तैयार हुआ करते थे ।

गुरुद्वारा हरिमन्दिर साहिब :

इस स्थान पर गुरु हरिगोबिन्द साहिब ने बाग़ लगवाया हुआ था । इस बाग में चारों ओर फव्वारे चला करते थे । इस बाग़ में अलग-अलग तरह के फलों तथा जड़ी-बुटियों के वृक्ष लगे हुये थे । एक प्रथा के अनुसार एक बार जब दारा शिकाह गुरु हरि राय साहिब को मिलने आया तो वह

यहीं बैठा था । गुरु साहिब ने उस को एक विशेष हरड़ दी थी जिस ने उस को एक लम्बी बीमारी से छुटकारा दिलाया था ।

गुरुद्वारा चुबच्चा साहिब

इस स्थान पर गुरु हरि राय साहिब के घोड़ों का चुबच्चा होता था । अब यह एक छोटा सा मकान है और इस भूमि पर घर और दुकानें बन गई है । गुरु हरि राय साहिब के पास २२०० घोड़े, बहुत सारे हाथी, भैंसें और गाय थी । उन्हों ने यह सभ अलग-अलग अस्तबलों में रखे हुये थे । इन सभी के लिये दाने का भंडार यहीं हुआ करता था । यह स्टोर आठों पहर, तीस दिन, बारह महीने दाने से भरा रहता था ।

गुररुद्वारा मंजी साहिब

यह बीबी रूप कौर (पुत्री गुरु हरि राय साहिब) का घर था । बीबी का विवाह भाई खेम करन (वासी पसरूर, ज़िला गुजरा वाला) के साथ हुआ था । किंतु वह तीन दिन ससुराल रहने के बाद गांव कलिआणपुर में आ बसे थे । उस समय यह इलाका कलिआणपुर में था तथा अब कीरतपुर साहिब में आ गया है । इसी स्थान पर बीबी रूप कौर के पुत्र भाई अमर सिंघ का जन्म हुआ था । भाई अमर सिंघ जी के उत्तराधिकारी कई वंशों तक यहाँ रहते रहे थे । यह गुरुद्वारा अभी पुरानी सूरत में ही है तथा जल्दी ही इसको कार-सेवा वाले बनाना शुरू कर रहे है । इस गुरुद्वारे में बीबी रूप कौर का हाथ से बना कढ़ाई किया रूमाल; उन के समय की गुरबाणी के शब्दों की एक पोथी (जिस में कई लोगों के देहांत की तारीखें लिखी हुई है), बीबी रूप कौर की एक हाथ पंखी तथा बाबा श्री चन्द की सेली टोपी पड़ी हुई हैं । यह सारी वस्तुएं माता बसी ने बीबी रूप कौर को दहेज में दी थी ।

गुरुद्वारा तीर साहिब

एक प्रथा के अनुसार गुरु हरिगोबिन्द साहिब ने एक बार यहाँ से एक तीर चलाया था जो सतलुज नदी के पास (आज के गुरुद्वारा पतालपुरी के पास) जा कर गिरा था ।

गुरुद्वारा पतालपुरी

यह गुरुद्वारा सतलुज नदी के किनारे पर है । गुरु हरिगोबिन्द साहिब एवं गुरु हरि राय साहिब का संस्कार यहीं पर हुआ था । गुरु हरिकृष्ण

साहिब, जो दिल्ली में ज्योति जोत समाए थे, की अस्थियाँ भी यहीं पर जल प्रवाह की गई थी । बाबा अणी राय (पुत्र गुरु हरिगोबिन्द साहिब) का संस्कार भी यहीं किया गया था । उस के बाद भी स्थानिय सिक्खों का संस्कार भी यहीं हुआ करता था । अब तो बहुत सारे सिक्खों ने अपने मृतकों की अस्थियाँ यहीं जलप्रवाह करनी शुरू कर दी हैं । हिन्दूओं के हरिद्वार की नकल यहाँ होने लगी है । जब कि सिक्खों का आदेश है कि मृतक की अस्थियाँ निकट के बहते पानी में प्रवाह की जायें । किंतु भोले सिक्ख इस स्थान को "सिक्ख हरिद्वार" मान कर यहाँ आने लगे हैं ।

गुरुद्वारा बिबानगढ़

गुरु तेग़ बहादुर साहिब की शहीदी के बाद भाई जैता (जीवन सिंघ), उस का पिता भाई आज्ञा, भाई ऊदा (पुत्र भाई खेमा चंदनीया) तथा भाई नानू राम दिलवाली गुरु साहिब का सीस दिल्ली से चक्क नानकी ले जाते हुये १६ नवम्बर १६७५ के दिन इस जगह रुके थे । यहाँ से गुरु गोबिन्द सिंघ साहिब तथा संगतों ने सीस को चक्क नानकी ले जा कर दूसरे दिन गुरुद्वारा सीस गंज वाले स्थान पर संस्कार किया था ।

गुरुद्वारा बाबा गुरदित्ता

बाबा गुरदित्ता तथा बाबा श्री चंद की याद में यह गुरुद्वारा कीरतपुर से एक किलोमीटर दूर एक पहाड़ी पर बना हुआ है । बाबा गुरदित्ता का देहांत इस स्थान पर हुआ था । यह पुराने ढंग की ईमारत है तथा अभी तक कार-सेवा वालों की नज़र से बची हुई है । इस स्थान पर एक नीम का पेड़ है जो बाबा गुरदित्ता के समय का माना जाता है । इस स्थान ये कीरतपुर तथा आस-पास का बहुत सा इलाका नज़र आता है । बाबा गुरदित्ता की याद में एक अन्य गुरुद्वारा गांव जिन्दवड़ी (कीरतपुर से ५ किलोमीटर दूर) में भी है ।

गुरुद्वारा जिंदवड़ी साहिब

यह स्थान अनंदपुर साहिब-नंगल सड़क से लगभग दो किलोमीटर दूर गांव जिन्दवड़ी में है । एक प्रथा के अनुसार बाबा गुरदित्ता ने इस जगह एक मृत्य गाय को जिन्दा किया था । कई ऐतिहासकार इस कहानी को काल्पनिक मानते है । उन के अनुसार यह स्थान बाबा गुरदित्ता की यात्रा की याद से सम्बंधित है ।

अनंदपुर साहिब तथा कीरतपुर साहिब के बीच निम्नलिखित गुरुद्वारे बने हुये है

गुरुद्वारा बरोटा साहिब :

यह गुरुद्वारा कीरतपुर से तीन किलोमीटर दूर है । एक प्रथा के अनुसार सातवें पातिशाह यहाँ हाथी बांधा करते थे । इस का नाम फीलखाना था । हाथी बांधने वाला किल्ला (खूंट) हरा हो जाने के बाद बरगद बन गया था । एक प्रथा के अनुसार दसवें पातिशाह भी यहाँ आया करते थे ।

गुरुद्वारा मिट्ठासर :

यह स्थान अनंदपुर साहिब से छः किलोमीटर तथा कीरतपुर से ३ किलोमीटर गांव कोटला के निकट है । यहाँ छटे पातिशाह ने एक कुआँ लगवाया था जिस का पानी बहुत मीठा था । इस कारण इस को 'मिट्ठा सर' गुरुद्वारा कहा जाता है ।

गुरुद्वारा भोगपुरा :

यह स्थान अनंदपुर साहिब से चार किलोमीटर दूर है । यहाँ गड्ढे के बीच ऊँचे टीले की पहाड़ी पर मंजी साहिब बना हुआ है । एक प्रथा के अनुसार दसवें पातिशाह यहाँ आया करते थे ।

* * *

अनंदपुर साहिब से सम्बंधित गुरुद्वारे

गुरु साहिब, साहिबज़ादा अजीत सिंघ तथा मुख्य सिंघों को अनंदपुर साहिब में रहते हुये पहाड़ी तथा मुग़ल सेनाओं के साथ कई लड़ाईयां भी करनी पड़ी थी । इन सभी लड़ाईयों वाले स्थानों पर गुरुद्वारे बने हुये हैं । इन में से कुछ निम्नलिखित है :

गुरुद्वारा निरमोहगढ़ :

निरमोहगढ़ (हरदो-निमोह) कीरतपुर साहिब से २ किलोमीटर दूर एक गांव है । गुरु गोबिन्द सिंघ साहिब इस गांव के बाहर एक बड़ी पहाड़ी पर ४ अक्तूबर से १४ अक्तूबर तक (११ दिन) रहे थे ।

२९ अगस्त से १ सितम्बर तक चार दिन अजमेर चंद बिलासपुरी की सेना ने अनंदपुर साहिब पर चार आक्रमण किये और चारों में मात खाई थी । आखिरी दिन की लड़ाई में अजमेर चंद के मामा केसरी चंद का सिर भी काटा गया था और बदनामी के कारण पहाड़ी राजा लोगों को मुँह दिखाने योग्य नहीं थे । सितम्बर १७०० के आख़िरी दिनों में पहाड़ी राजा बिलासपुर में एकत्रित हुये और विचार किया गुरु साहिब के साथ समझौता कर के अपना सम्मान बचाया जाये । उन्होंने २ अक्तूबर के दिन वृद्ध मंत्री परमानंद को अनंदपुर साहिब भेजा । परमानंद ने आटे की गाय बनाकर अनंदगढ़ किले के बाहर रख दी और साथ एक पत्र भी रख दिया जिस पर लिखा हुआ था कि गुरु जी आप कुछ दिनों के लिए अनंदपुर साहिब खाली कर दें तो हमारा सम्मान रह जायेगा । कुछ दिन बाद आप फिर लौट आना । हम गाय की सौगन्ध खा कर कहते है कि हम फिर कभी भी अनंदपुर साहिब पर आक्रमण नहीं करेंगे । गुरु साहिब पहाड़ी लोगों की चालाकी को समझते थे किन्तु फिर भी उन पर तरस खा कर अनंदपुर छोड़ दिया तथा निरमोहगढ़ की टिब्बी (एक छोटी पहाड़ी) पर जा कर तम्बू लगा

लिये । किन्तु पहाड़ी राजे गाय की सौगन्ध खा कर भी अपनी बात से फिर गये । उन्हों ने ८ अक्तूबर १७०० के दिन निरमोहगढ़ की पहाड़ी पर आक्रमण कर दिया । इस लड़ाई में बहुत से पहाड़ी सैनिक मारे गये । इस लड़ाई में दीवान साहिब सिंघ छिब्बर, भाई मथरा सिंघ (पुत्र शहीद दयाल दास), भाई सूरत सिंघ, भाई देवा सिंघ, भाई अनूप सिंघ, भाई सरूप सिंघ आदि शहीद हो गये । शाम तक थक कर पहाड़ी सेना लौट गई ।

अब अजमेर चंद ने वृद्ध मंत्री को सरहिंद के गर्वनर की ओर भेजा तथा गुरु साहिब पर आक्रमण करने की प्रार्थना की । सरहिंद के गर्वनर ने १३ अक्तूबर को रुसतम ख़ां तथा नाहर ख़ां के नेतृत्व में सेना भेज दी । मुग़ल सेना ने निरमोहगढ़ के पास एक अन्य पहाड़ी पर मोर्चा लगा दिया । नाहर खां ने तोप चालक को निरमोहगढ़ पर गोला मारने के लिये कहा । गोला सीधे राम सिंघ कश्मीरी (जो गुरु जी पर चौर कर रहा था) को लगा । वह उसी स्थान पर शहीद हो गया । इस पर गुरु साहिब ने निशाना बांध कर तीर मारा । इस तीर से रुसतम ख़ां मारा गया । भाई उदय सिंघ के एक तीर ने नासिर ख़ां की जान ले ली । दोनों के मरने के बाद भी एक पहर युद्ध हुआ । इस युद्ध में कई मुग़ल सिपाही मारे गये । लड़ाई में भाई हिम्मत सिंघ, भाई मोहर सिंघ आदि सिक्ख शहीद हो गये ।

१४ अक्तूबर को अजमेर चंद ने दूसरी बार हमला कर दिया । इस दिन भी भीषण युद्ध हुआ । दोनों ओर से काफी जानी नुकसान हुआ । अढ़ाई पहर की लड़ाई में भाई जीता सिंघ, भाई नेता सिंघ तथा कई अन्य सिंघ शहीद हो गये ।

१५ अक्तूबर को बसाली के राजा सलाही चंद के कहने पर गुरु साहिब निरमोहगढ़ छोड़ कर सतलुज नदी पार कर के बसाली चले गये । बसाली जाते समय फिर झड़पें हुई । इन लड़ाईयों में भाई केसरा सिंघ, भाई गोकल सिंघ आदि शहीद हो गये ।

निरमोहगढ़ की लड़ाई या गुरु साहिब के वहाँ रहने के सम्बंध में १९७० तक कोई यादगार नहीं थी । इस के बाद पहाड़ी के नीचे एक सिक्ख की हिम्मत से एक छोटा सा गुरुद्वारा बना । बाद में उधर पहाड़ी के ऊपर भी एक गुरुद्वारा बनना शुरू हुआ । अभी तक सिर्फ छत ही पड़ी है, ईमारत

का काम अभी रहता है । हो सकता है कि खालसा की तीसरी शताब्दी के दौरान यहाँ भी यादगार तैयार हो जायेगी ।

गुरुद्वारा बसाली :

बसाली कीरतपुर साहिब से लगभग १४ किलोमीटर सीधा रास्ता बनता है । वहाँ सड़क के रास्ते अनंदपुर साहिब से नूरपुर बेदी हो कर जाना पड़ता है या फिर रोपड़-नूरपुर बेदी रास्ता पकड़ना पड़ता है । नूरपुर बेदी से बसाली ६ किलोमीटर है । बसाली १७०० में एक छोटी सी रियासत थी । इसका राजा सालाही चंद अजमेर चंद बिलासपुरी की दादी का जीजा था । निरमोहगढ़ की लड़ाई के समय राजा सालाही चंद गुरु साहिब को बसाली ले गये थे । बसाली जाते समय सतलुज के किनारे पर फिर लड़ाई हुई थी । जब गुरु साहिब बसाली पहुँचे तो वहाँ के लोगों ने आप का स्वागत बड़ी गर्मजोशी से किया । बसाली गांव एक बहुत लम्बी चौड़ी पहाड़ी पर बसा हुआ है । इस के आस-पास तीनों ओर कई पहाड़ियां है तथा चौथी ओर मैदान है । यहाँ से ले कर नदी सतलुज तक तब बसाली रियासत थी ।

बसाली में गुरु साहिब राजा के महल में पहाड़ी के ऊपर रहे और बाकी सिक्खों के लिये पहाड़ के नीचे मैदानी इलाके में तम्बू लगा दिया गया था । गुरु साहिब १५ अक्तूबर से २९ अक्तूबर १७०० तक पन्द्रह दिन बसाली रहे तथा फिर अनंदपुर साहिब लौट गये । उस समय अनंदपुर साहिब तक सीधा रास्ता २० किलोमीटर था तथा सतलुज नदी पार करनी पड़ती थी ।

किसी समय बसाली के राजा महल में गुरु साहिब की याद में गुरुद्वारा बना हुआ था । बाद में किसी ने उस घर पर अधिकार जमा लिया और धीरे-धीरे गुरुद्वारे का नामो-निशान मिटा दिया गया । अब तो सलाही चंद की समाधि वाली जगह के अतिरिक्त बसाली के राजा या उस वंश की कोई भी याद कायिम नहीं है । सिक्खों ने पहाड़ के नीचे एक नया गुरुद्वारा बनाया हुआ है । गुरुद्वारे की आमदनी थोड़ी है किन्तु फिर भी गुरुद्वारे के सेवादार आने वालों की सेवा करते है । शाही मकान वाले गुरुद्वारे का कोई स्थान नहीं मिलती किन्तु आज से एक सौ साल पहले ज्ञानी ज्ञान सिंघ ने गुरधामों के सम्बंध में लिखी किताब में इसका विवरण भी दिया था ।

बसाली में केवल एक पिछड़ी जाति के सिक्ख के घर को छोड़ कर अन्य सभी घर हिन्दू राजपूतों के है जो सिक्खों को पसन्द नहीं करते किन्तु सिक्खों से सहायता अवश्य लेना चाहते है । वे चाहते है कि सिक्ख पहाड़ी तक पक्की सड़क बना दें किन्तु वे गुरुद्वारें की पुरानी भूमि को तैयार नहीं है ।

गुरुद्वारा कलमोट :

बसाली में पाँच दिन रहने के बाद गुरु साहिब ने शिकार पर जाने की तैयारी की । २० अक्तूबर १७०० के दिन गुरु साहिब, भाई उदय सिंघ और कुछ अन्य सिक्ख शिकार की खोज में निकले । वे बसाली से नंगल की ओर पहाड़ों के बीच शिकार खोलते एक व्याघ्र का पीछा करते गांव कलमोट के पास आ गये । यहाँ आ कर व्याघ्र गोली के साथ घायल हो कर गिर गया । कलमोट के रंघड़ और गुज्जर आवाजें सुन कर घरों से बाहर निकल आये और छोटी सी बात पर झगड़ने लगे । आपसी मुठभेड़ में एक सिक्ख भाई जीवन सिंघ (भाई मनी सिंघ का चाचा) घायल हो कर शहीद हो गया । कुछ कलमोट वासी भी मारे गये ।

कलमोट बसाली से लगभग २०-२५ किलोमीटर दूर है । यह अनंदपुर साहिब से भी लगभग १८ किलोमीटर पड़ता है लेकिन गुरु साहिब के समय आज जैसी सड़कें नहीं थी तथा सीधी उड़ान जैसे कच्चे रास्ते से निकट पड़ता है । कलमोट में गुरु साहिब की याद में गुरुद्वारा कोई डेढ़ सौ साल पहले बना था । तब गुरुद्वारा छोटा सा था । १९६० के बाद यहाँ नई ईमारत का निर्माण हुआ था । गुरुद्वारा गांव की पहाड़ी के ऊपर है । जब गुरुद्वारा बना था तब ऊपर तक कच्ची पहाड़ी-पगडंडी बनी हुई थी । उस का कुछ हिस्सा अब समाप्त हो गया है तथा वहाँ बूटी उगी हुई है । सिर्फ थोड़ी सी मेहनत से यह सड़क अच्छी बन सकती है । कभी यहाँ की आबादी काफी थी । दर्जनों मकानों के खण्डर अभी भी नजर आते है । सिर्फ एक पंडित परिवार और एक ग्रंथी सिंघ ही पहाड़ पर रहते है । अन्य सभी लोग खतरनाक जड़ी-बूटी से डरते नीचे गांव में चले गये है । कलमोट गांव हिन्दूओं का गांव है । यहाँ सिक्खों का कोई घर नहीं । गांव कलमोट भी भूमि तल से बहुत ऊचा है कोई एक किलोमीटर की चड़ाई पर है । नीचे उतर कर पास ही गांव खेड़ा है । इस कारण इस को "खेड़ा कलमोट"

भी कहा जाता है । यहाँ से गुरपलाह गुरुद्वारा लगभग ८ किलोमीटर है । कलमोट पंजाब में और गुरपलाह (ऊना ज़िला) हिमाचल में है । कलमोट पहुँचने के लिये नूरपुर बेदी की सड़क पर काहनपुर खूही से सड़क मुड़ती है और सीधे खेड़ा कलमोट तक जाती है ।

गुरुद्वारा बजरूड़ :

१५ मार्च १७०१ के दिन दड़प देश की संगत अनंदपुर साहिब गुरु साहिब के दर्शन के लिये आई । अनंदपुर साहिब आती संगत को रास्ते में बजरूड़ गांव के लोगों ने लूट लिया । जब संगतों ने गुरू साहिब को इस सम्बंध में बताया तो गुरु साहिब ने साहिबज़ादा अजीत सिंघ और भाई उदय सिंघ के नेतृत्व में एक सौ सिक्खों का एक दल बजरूड़ गांव को भेजा । सिक्खों ने लुटेरों के नेता चित्तू और मित्तू को कड़ी सज़ा दी तथा उन का साथ देने वालों की भी अच्छी पिटाई की और उन के घर तोड़ डाले । इस के बाद अनंदपुर साहिब की ओर आने वाली संगत को कभी भी किसी ने भी रास्ते में तंग नहीं किया ।

बजरूड़ गांव अनंदपुर से पक्षी की उड़ान पर केवल सात-आठ किलोमीटर है पर सड़क के रास्ते नूरपुर बेदी से लगभग ९ किलोमीटर है । यहाँ गुरु गोबिन्द सिंघ साहिब के नाम पर एक गुरुद्वारा बना हुआ है । यहाँ किसी ने राम राय के नाम पर बच्चों का स्कूल भी खोला हुआ है । (सिक्खों को गुरु साहिब ने राम-राईयें के साथ सम्बंध रखने पर पाबंदी लगाई हुई है) । इस गुरुद्वारे का प्रबन्ध अभी स्थानिय लोगों के पास ही है ।

गुरुद्वारा बस्सी कलां :

६ मार्च १७०३ के दिन दुआबे का एक ब्राह्मण देवकी दास अनंदपुर साहिब आया और गुरु साहिब के पास प्रार्थता की कि बस्सी कलां का मुखिया जबरजंग खां उस की पत्नी को ज़बरदस्ती ले गया है । गुरु साहिब ने उस ब्राह्मण की पत्नी वापिस दिलाने के लिये साहिबज़ादा अजीत सिंघ और भाई उदय सिंघ के नेतृत्व में एक सौ सिक्खों को अनंदपुर साहिब से गांव बस्सी कलां (होशियारपुर से १२ किलोमीटर) भेजा ७ मार्च के दिन सिक्खों ने जबर जंग खां को घेरा और ब्राह्मण को उस की पत्नी वापिस दिलाई । बस्सी कलां में सिक्खों के इस कारनामे की याद में एक गुरुद्वारा

बना हुआ है । पहले यह एक छोटी सी यादगार थी किन्तु १९८० में इस स्थान पर एक शानदार ईमारत बनाई गई है ।

अनंदपुर साहिब से दूर

गुरु गोबिन्द सिंघ साहिब से सम्बंधित गुरुद्वारे

इन स्थानों के अतिरिक्त गुरु साहिब कई अन्य नगरों में भी गये । इन में बिलासपुर, रिवालसर, पुरमंडल, जम्मू, चक्क कान्हा, रामगढ़, खिरड़ी, सांबा, पठानकोट, होशियारपुर, नाहन, पाऊँटा, भंगाणी, नदौण आदि मुख्य है । भंगाणी और नदैण में गुरु साहिब ने लड़ाई में भी भाग लिया था । इन सभी स्थानों में कई स्थानों पर गुरुद्वारे बने हुये है । लेकिन पुरमंडल, जम्मू, चक्क कान्हा, रामगढ़, खिरड़ी, सांबा, पठानकोट और होशियारपुर में गुरु साहिब की याद में अभी कोई गुरुद्वारा नहीं बना । कुछ गुरुद्वारे निम्नलिखित है :

गुरुद्वारा बिलासपुर :

बिलासपुर कीरतपुर साहिब से लगभग ६० किलोमीटर दूर है । कभी यह कहिलूर रियासत की राजधानी थी । अक्तूबर १६१९ में गुरु हरिगोबिन्द साहिब ने यहाँ के राजा कल्याण चंद और कुंवर तारा चंद को ग्वालियर के किले से मुक्त करवाया था । छठे तथा दसवें पातिशाह तक के समय में इस रियासात के सिक्खों के साथ सम्बंध रहे थे । राजा कल्याण चंद से राजा भीम चंद तक गुरु साहिब के साथ सम्बंध अच्छे थे । किन्तु, १६९२ में जब अजमेर चंद राजा बना तो उस ने गुरु साहिब के साथ बिना किसी कारण सम्बंध बिगाड़ लिये । फिर उस ने गुरु साहिब पर कई बार आक्रमण किये और अन्त में गुरु साहिब को अनंदपुर साहिब छोड़ कर जाना पड़ा । अनंदपुर साहिब चक्क नानकी और कीरतपुर साहिब के इलाके किसी समय रियासत कहिलूर का हिस्सा थे ।

जब बिलासपुर के राजा गुरु साहिब के वफादार थे तो गुरु साहिब राज घराने के हर पारिवारिक अवसर पर बिलासपुर पहुँचा करते थे । इस नगर में नौवें तथा दसवें नानक ने कई बार दर्शन दिये थे । गुरु गोबिन्द साहिब

यहाँ चार बार गये थे । साहिबज़ादा अजीत सिंघ छोटी उम्र में यहाँ गये थे । माता नानकी (माता गुरु तेग़ बहादुर साहिब), माता गुजरी, माता जीत कौर, बीबी रूप कौर (पुत्री गुरु हरि राय साहिब), माता बसी (माता गुरु हरि राय साहिब), माता सुलखणी (पत्नी गुरु हरि राय साहिब) राम राये और अन्य बहुत से सिक्ख कई बार बिलासपुर गये थे । १६९१ में बिलासपुर की रानी चम्पा का देहांत हो गया । वह लगभग ४० साल गुरु परिवारों से जुड़ी रही थी तथा उसके समय गुरु साहिबान अक्सर या तो स्वंय बिलासपुर जाया करते थे या रानी चम्पा और उस का पुत्र राजा भीम चंद चक्क नानकी अनंदपुर साहिब आया करते थे ।

गुरु साहिब की याद में शाही महल में एक गुरुद्वारा बना हुआ था । लेकिन बिलासपुर के कुछ सिक्ख-दुश्मन राजाओं ने इस स्थान को बंद किया हुआ था तथा सिक्खों को यहाँ आने भी नहीं दिया जाता था । वाहिगुरु ने बिलासपुर के इस परिवार को ऐसी सज़ा दी कि वह बिलासपुर शहर, जिस में शाही महल थे, भाखंड़ा बांध के लिये बने सागर में ५० फुट पानी के नीचे चला गया तथा उस सागर का नाम गुरु गोबिन्द सिंघ साहिब की याद में ''गोबिन्द सागर'' रखा गया है । सिक्खों को गुरु साहिब की यादगार के पास न आने देने वालों का महल, राजधानी, रियासत तथा खानदान भी समाप्त हो गया ।

वह गुरुद्वारा शाही महल के पास ही 'गोबिन्द सागर' का भले ही हिस्सा बन गया किन्तु सारा सागर ही गुरु साहिब की यादगार बन गया है । आजकल पुराने बिलासपुर से दूर ऊपर वाली पहाड़ियों के बीच नये बसाये गये नये बिलासपुर में दसवीं पातिशाही की याद में एक स्थान पर गुरुद्वारा बनाया गया है । इस की ईमारत नयी है तथा इस का प्रबन्ध शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के पास है । बिलासपुर में सिक्खों के केवल दो ही घर है तथा केवल यात्री ही गुरुद्वारे जाते है । पुराने बिलासपुर के दूसरी ओर पहाड़ियों में बसे छोटे-छोटे गांवों में कुछ घर पिछड़ी जाति के सिक्खों के है ।

गुरुद्वारा रिवालसर :

मार्च १६९२ में बिलासपुर के राजा भीम चंद के उत्साह से पहाड़ी राजाओं ने एक सम्मेलन करने का निश्चय किया । उन्हों ने इस का नेतृत्व करने

के लिये गुरु गोबिन्द सिंघ साहिब से प्रार्थना की । २८ मार्च १६९२ के दिन यह सम्मेलन रिवालसर में हुआ । इस सम्मेलन में गुरु साहिब ने पहाड़ी राजाओं की निगहबानी तथा नेतृत्व करने के लिये अपनी स्वीकृति दी तथा पहाड़ी राजाओं ने भी वायदा लिया कि वह हमेशा इकट्ठे रहेगें तथा मुग़लों की गुलामी को स्वीकार नहीं करेंगे ।

गुरु साहिब की रिवालसर में जाने की याद में एक बड़ा शानदार गुरुद्वारा बना हुआ है । रिवालसर पहाड़ों में एक बड़ी रमणीक वादी है । रिवालसर जाने के लिये मंडी से सड़क मुड़ती है । यह मंडी से १६ किलोमीटर दूरी पर है । कभी यह बुद्ध धर्म का एक बड़ा तथा विशेष केन्द्र था । आजकल भी कुछ बौद्ध लामे वहाँ रहते है किन्तु स्थानिय हिन्दू बौद्धियों तथा सिक्खों से घृणा करते है तथा उन्हें तंग करने का प्रयास करते रहते है ।

गुरुद्वारा नदौण :

मार्च १६९० में मुग़ल सेना ने जम्मू के गर्वनर की ओर से भेजे गये सेनापति अलफ ख़ान के नेतृत्व में पहाड़ी राजाओं से कर लेने के लिए आक्रमण कर दिया । कांगड़े का राजा कृपाल चंद और बिंझड़वाल का राजा दियाल भी उसके साथ मिल गया । इधर बिलासपुर के राजे भीम चंद ने बाकी पहाड़ी रिसायतों की सेना को एकत्रित कर लिया । उस ने गुरु गोबिन्द सिंघ साहिब से भी सहायता मांगी । गुरु साहिब खालसा दल को ले कर पहाड़ी सेना की सहायता के लिये गये । यह लड़ाई २० मार्च १६९० के दिन नदौण (कांगड़ा से ३२ किलोमीटर तथा ज्वालामुखी से १२ किलोमीटर दूर) में, ब्यास नदी के किनारे पर, हुई । इस लड़ाई में भाई सोहन चंद (भाई, भाई मनी सिंघ), भाई मूल चंद (पुत्र भाई रघुपति राय कंबोज खेमकरनी) तथा कुछ अन्य सिक्ख शहीद हो गये । लड़ाई जीतने के बाद गुरु साहिब सात दिन नदौण के राजा के महल में ठहरें तथा फिर अनंदपुर साहिब की ओर चल पड़े ।

गुरु साहिब की याद में ब्यास नदी के किनारे एक शानदार गुरुद्वारा १९२९ में बनाया गया था । १९३५ से इस का प्रबंध शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के पास है । नदौण से अनंदपुर साहिब आते रास्ते में आलसून गांव के लोगों ने सिक्खों पर व्यंग कसे थे । सिक्ख सेना ने नदौण से आते

समय इन लोगों की पिटाई की । नदौण-अनंदपुर रास्ते पर इस नाम के किसी गांव का काफी समय कोई पता नहीं लगा था । ऊना जिला (हिमाचल) के एक गांव समालरा (बांगणा से छः किलोमीटर) की एक स्थानिक प्रथा के अनुसार मार्च १६९१ की वह ऐतिहासिक घटना इस जगह पर हुई थी । पर, गुरु साहिब ने भी 'बचित्र नाटक' में गांव का नाम अलसून ही लिखा है । एक अन्य स्रोत के अनुसार अलसून नदौण से २५ किलोमीटर पूरब की ओर ब्राह्मणों तथा राजपूतों का एक गांव है ।

नाहन, पाऊंटा साहिब तथा भंगाणी साहिब :

२८ मार्च १६८५ के दिन नाहन के राजा मंत्री चक्क नानकी आया और उस ने गुरु गोबिन्द सिंघ साहिब को राजा की ओर से नाहन आने का न्यौता दिया । गुरु साहिब परिवार तथा मुखी सिक्खों सहित १४ अप्रैल के दिन नाहन पहुँचे । नाहन में गुरु साहिब की याद में दो गुरुद्वारे बने हुये है । नाहन के राजा की प्रार्थना मान कर गुरु साहिब ने सिरमौर रियासत में रहना स्वीकार किया । इस मकसद के लिये गुरु साहिब ने यमुना नदी के किनारे २९ अप्रैल १६८५ के दिन पाऊंटा नगर की नींव रखी । इस नगर में सब से पहले किला और रहने के लिये घर बनाये गये । धीरे-धीरे यहाँ ५२ कवि तथा अन्य कलाकार भी गुरु साहिब के दरबार में एकत्रित हो गये । गुरु साहिब यहाँ साड़े तीन साल रहे और २८ अक्तूबर १६८५ के दिन चक्क नानकी की ओर चल पढ़े । यहाँ रहते आप को गढ़वाल के रजवाड़े फतहि शाह के साथ १८ सितम्बर १६८८ के दिन भंगाणी गांव (पाऊटा से ११ किलोमीटर) में एक लड़ाई भी लड़नी पड़ी । पाऊंटा साहिब और भंगाणी में गुरु साहिब की याद में गुरुद्वारे बने हुये है ।

यहाँ पाऊंटा साहिब, भंगाणी, नाहन, रिवालसर तथा नदौण में गुरु साहिब की यादगार तथा इतिहास का जिक्र ज़रूर किया गया है किन्तु ये सभी स्थान अनंदपुर साहिब के साथ सम्बंधित होने पर भी इस नगर से बहुत दूर है । बिलासपुर भी कीरतपुर साहिब से ६० किलोमीटर और अनंदपुर साहिब से लगभग ७० किलोमीटर दूर है । वैसे लगभग सभी स्थानों पर यात्रियों के ठहरने के लिये प्रबंध हैं ।

अनंदपुर साहिब से गुरु साहिब की अंतिम यात्री के गुरुद्वारे

५-६ दिसम्बर १७०५ की रात को गुरु गोबिन्द सिंघ साहिब, माता गुजरी, चार साहिबज़ादें और ५०० सिंघों के साथ अनंदपुर साहिब से चल पड़े । आप ने कीरतपुर, झक्खीयां-शाही टिब्बी से होते हुये नंगल-गुजराँ (अब नंगल सरसा) के पास सरसा नदी पार की । यहाँ से माता गुजरी जी और दो छोटे साहिबज़ादे चमकौर को चले गऐ और गुरु साहिब स्वंय कोटला निहंग (रोपड़) की ओर निकल गये । बाकी सिक्खों ने झक्खीयां की जूह में, शाही टिब्बी के पास तथा नंगल गुजराँ में मोर्चा लगा लिया । एक सौ सिक्ख भाई बचित्र सिंघ के नेतृत्व में रोपड़ की ओर चले गये । उन्हें रास्ते में मुग़लों की सेना के साथ मलकपुर रंघड़ों में टक्कर लेनी पड़ी । शाही टिब्बी के पास, झक्खीयां गांव की जूह में, नंगल गुजराँ में तथा मलकपुर रंघड़ाँ में भीषण युद्ध हुये । इन घटनाओं की याद में कीरतपुर से कोट निहंग तक कुछ गुरुद्वारे बने हुये है । किन्तु कुछ स्थानों पर अभी गुरुद्वारे बनने रहते है ।

शाही टिब्बी :

५-६ दिसम्बर की रात को अनंदपुर साहिब से चल कर गुरु साहिब, माता गुजरी, चार साहिबज़ादें और ५०० सिक्ख कीरतपुर तक कुशल पूर्वक और शांति से निकल गये । शाही टिब्बी के पास पहुँचते ही पहाड़ी सैनिकों ने आप पर तीरों और गोलों की बरसात शुरू कर दी । गुरु साहिब ने भाई उदय सिंघ को अपने वस्त्र पहना दिये तथा स्वंय परिवार सहित सरसा नदी पार कर गये । आप के साथ पचास सिक्खों का एक दल भी पार कर गया । जाने से पहले आपने भाई उदय सिंघ को शाही टिब्बी पर तैनात कर दिया, भाई जीवन सिंघ को नंगल गुजरा (अब नगंल सिरसा) के पास,

झक्खीयां गांव की जूह में, पीछे आ रही सेना को रोकने की जिम्मेदारी सौंप दी तथा भाई बचित्र सिंघ को रोपड़ की ओर रवाना कर दिया। पीछे आ रही पहाड़ी सेना के साथ भाई उदय सिंघ तथा उन के पचास साथी बड़ी बहादुरी के साथ लड़े। सैकड़ों दुश्मनों को मारने के बाद सारे ५१ सिक्ख शहीद हो गये। अजमेर चंद ने वस्त्रों से भाई उदय सिंघ को गुरु गोबिन्द सिंघ समझ लिया तथा उस का सिर काट कर रोपड़ भेज दिया। वे गुरु साहिब को 'मार देने' के भ्रम में आनन्दित होते बिलासपुर चले गये तथा मुग़ल सेना रोपड़ की ओर चली गई।

भाई उदय सिंघ तथा अन्य पचास सिक्खों की यादगार अभी शाही टिब्बी पर बननी है। खालसा की तीसरी शताब्दी के अवसर पर यह यादगार बनाना शहीदों को सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

गांव झक्खीयां की जूह :

गुरु साहिब ने सिरसा नदी पार करते समय भाई जीवन सिंघ को एक सौ सिक्खों का सेनापति बना कर गांव नंगल गुजराँ के पास, झक्खीयां गांव की जूह में, पीछे आ रही सेना का रास्ता रोकने का कार्यभार सौंपा। दुश्मन की सेना ने दूर से ही तीरों की बरसात करनी शुरू कर दी। भाई जीवन सिंघ ने भी तीरों की बौछार से तूफान खड़ा कर दिया। तीर समाप्त होने के बाद आमने-सामने लड़ाई शुरू हो गई। इस लड़ाई में भाई जीवन सिंघ और उन के एक सौ साथियों ने मुग़लों का ज़बरदस्त मुकाबला किया। लड़ाई के दौरान एक गोली सीधी भाई जीवन सिंघ के माथे के बीच आ लगी तथा उस ने "वाहेगुरु जी की फ़तह" कह कर अपने श्वास छोड़ दिये। दिन डूबने तक सभी सिक्ख शहीद हो चुके थे। इन में एक बीबी भिक्खाँ भी थी जो भाई आलम सिंघ 'नच्चणा' की सुपत्नी और भाई बजर सिंघ (गुरु साहिब को शस्त्र चलाना सिखाने वाला) की बेटी थी। गांव झक्खीयां की सीमा में अभी तक कोई गुरुद्वारा नहीं बना है। भाई जीवन सिंघ की याद में एक गुरुद्वारा चमकौर साहिब में बना हुआ है जबकि वह सरसा नदी के किनारे, गांव झक्खीयां की सीमा में, शहीद हुये थे। भाई जीवन सिंघ, बीबी भिक्खाँ तथा एक सौ सिक्खों की याद में वास्तविक

शहीदी स्थल पर यादगार बननी अभी रहती है । हो सकता है कि यह निशाना खालसा के तीन सौ साला की याद के समारोहों के दौरान पूरा हो जाये ।

गुरुद्वारा परिवार विछोड़ा :

गांव नगंल गुजराँ (अब नंगल सरसा) में एक गुरुद्वारा इस वक्त बहुत बड़ी ईमारत के रूप में नज़र आता है । पहले यह एक छोटा सा गुरुद्वारा था । अब वाली ईमारत बाबा अजीत सिंघ 'परिवार विछोड़ा' ने १९६४ में बनवानी आरम्भ की थी । १९९८ में उन्हों ने इस को शिरोमणि प्रबंधक कमेटी को सौंप दिया था । अब इस गुरुद्वारे के साथ सात एकड़ ज़मीन है तथा अभी भी विस्तार हो रहा है । कुछ लोगों का विचार है कि वास्तविक स्थान यह नहीं था । किन्तु भट्टों की किताबों के अनुसार गुरु साहिब तथा उन का परिवार सरसा नदी पार कर के ही चमकौर तथा रौपड़ की ओर गये थे । सरसा नदी पहले इस गांव के पास से ही बहती थी । इतिहास में झक्खीयां गांव की सीमा, शाही टिब्बी तथा नगंल गुजराँ (अब नगंल सरसा) का भी विवरण मिलता है ।

गुरुद्वारा मलिकपुर :

पहले यह गांव रंघड़ों का होने के कारण मलिकपुर रंघड़ाँ कहलवाता था । यहाँ केवल दो घर ही सिक्खों के थे । गुरु तेग़ बहादुर साहिब चक्क नानकी से आते यहीं पर ठहरा करते थे । १२ जुलाई १६७५ के दिन रोपड़ के नूर मुहम्मद ख़ान मिरज़ा ने गुरु साहिब को शाही आदेश अधीन भाई निगाहीया के घर से, मलिकपुर रंघड़ाँ से ही बंदी बनाया था । ६ दिसम्बर १७०५ के दिन भाई बचित्र सिंघ तथा उस के एक सौ साथी यहीं पर सरहिंद की मुग़ल सेना के साथ हुई लड़ाई मे गम्भीर घायल हुये थे । एक सौ सिक्खों में से केवल उन्हीं के श्वास ही बाकी थे । मुग़ल सेना उन को मुर्दा समझ कर छोड़ कर चली गई थी । पीछे आ रहे साहिबज़ादा अजीत सिंघ तथा उन के एक सौ सिक्खों के दल ने भाई बचित्र सिंघ को ज़ख्मी पड़े देखा तो वह उन को साथियों की सहायता से उठा कर कोट निहंग ले गये ।

मलिकपुर रंघड़ाँ को अब सिर्फ मलिकपुर कहते है । यहाँ के स्थानिक

सिक्खों ने भाई बचित्र सिंघ की याद में एक गुरुद्वारा बना लिया है किन्तु उन्हें अभी तक गुरु तेग़ बहादुर साहिब के इस गांव से बंदी बनाये जाने के सम्बंध में मालुम नहीं था । यह गुरुद्वारा भी पंथक प्रबंध के अधीन होना चाहता है । यहाँ भी गुरु तेग़ बहादुर साहिब, भाई मती दास, भाई सती दास, भाई दियाल दास, भाई बचित्र सिंघ तथा उनके साथी एक सौ शहीद सिक्खों की यादगार बननी चाहिये ।

गुरुद्वारा भट्ठा साहिब :

सिरसा नदी पार क रके गुरु साहिब कुछ सिक्खों सहित ६ दिसम्बर की सुबह से पहले रोपड़ के पास गांव कोटला निहंग में भाई निहंग ख़ान के किले में पहुँच गये थे । उधर साहिबज़ादा अजीत सिंघ तथा उन का दल भी भाई बचित्र सिंघ को उठा कर वहाँ ले आया था । ६-७ दिसम्बर की रात को गुरु साहिब, साहिबज़ादा अजीत सिंघ तथा लगभग ४० सिक्ख वहाँ से निकल गये थे । पीछे घायल भाई बचित्र सिंघ ही रह गया था । दूसरे दिन उस का भी देहांत हो गया । उस का संस्कार भाई बग्गा सिंघ बढ़ई तथा भाई गुरसा सिंघ गहूणीया-सैणी ने किया था । कोटला निहंग में पहले गुरु हरिगोबिन्द साहिब, गुरु हरिकृष्ण साहिब, गुरु तेग़ बहादुर साहिब भी आ चुके थे । गुरु गोबिन्द सिंघ साहिब ने यहाँ से चमकौर की ओर जाने से पहले भाई निहंग ख़ान को एक तलवार, एक कटार तथा एक ढाल दी थी। यह तीनों यादगारें उस परिवार के पास १९४७ तक थी । १९४७ में वह पाकिस्तान चले गये । अब तलवार तथा कटार गुरुद्वारा भट्ठा साहिब में पड़ी है तथा ढाल भाई निहंग ख़ान के किले के साथ बने एक नये गुरुद्वारे में पड़ी बताई जाती है । गांव के बाहर भाई निहंग ख़ान की बेटी 'माई मुमताज,' जिस ने भाई बचित्र सिंघ की याद में ही ज़िन्दगी बीता दी थी, की यादगार भी है ।

गुरुद्वारा भट्ठा साहिब की वर्तमान ईमारत १९८५ में बननी शुरू हुई थी । इस स्थान पर सब से पहला गुरुद्वारा १९१४ में बना था । १९८५ में इस को शिरोमणि कमेटी के प्रबंध अधीन कर दिया गया था । गुरुद्वारा भट्ठा साहिब रोपड़ से सिर्फ दो किलोमीटर दूर है तथा चण्डीगढ़ से अनंदपुर साहिब जाते समय रोपड़ से पहले आता है ।

चमकौर की ओर गुरुद्वारे :

कोटला निहंग से चल कर गुरु गोबिन्द सिंघ साहिब बूर माजरा होते हुये चमकौर पहुँचे थे । चमकौर में ७ तारीख की शाम को बड़ी ज़बरदस्त लड़ाई हुई । गुरु साहिब के साथी चालीस सिक्खों ने हज़ारों की सेना का बहादुरी से मुकाबला किया । उस रात गुरु साहिब भाई नबी ख़ान तथा भाई ग़नी ख़ान की सहायता से चमकौर के किले से निकल गये । इस स्थान पर दो साहिबज़ादे (अजीत सिंघ तथा जुझार सिंघ), तीन प्यारे (भाई हिम्मत सिंघ, भाई मोहकम सिंघ तथा भाई साहिब सिंघ) तथा पैंतीस सिक्ख शहीद हुये थे । चमकौर में गुरु साहिब तथा शहीदों की याद में कई गुरुद्वारें बने हुये है । इस के पश्चात गुरु साहिब माछीवाड़ा तथा वहाँ अलग-अलग गांवों से होते हुये तलवंडी साबो पहुँचे थे । कोटला निहंग से तलवंडी साबो तक जहाँ-जहाँ से गुरु साहिब निकल कर या ठहर कर गये थे वहाँ लगभग सभी स्थानों पर गुरुद्वारे बने हुये है । अजनेर गांव में और कुछ दूसरे स्थानों पर अभी गुरुद्वारे बनने रहते हैं । गुरु साहिब ने माछीवाड़ा से चलकर पहला पड़ाव अजनेर में ही किया था ।

इसी प्रकार ३० अक्तूबर १७०६ के दिन तलवंडी साबो से चल कर गुरु साहिब नंदेड़ तक गये थे । इस रास्ते में भी कई स्थानों पर गुरु साहिब की याद में गुरुद्वारे बने हुये है ।

कुछ अन्य गुरुद्वारे :

गुरुद्वारा बिभौर साहिब :

नंगल कस्बे से लगभग डेढ़ किलोमीटर सुर्योदय की ओर नया नंगल के पास सतलुज नदी के किनारे पर गुरुद्वारा बिभोर साहिब है । बिभोर भी १७वीं सदी में एक छोटी सी रियासत थी तथा इस का राजा गुरु साहिब का श्रद्धावान था । अप्रैल १६९२ में जब गुरु साहिब मंडी, रिवालसर, पुरमंडल, जम्मू, पठानकोट, होशियारपुर से होते हुये अनंदपुर साहिब की ओर आये तो वह रास्ते में इस स्थान पर ठहरे थे । शाही परिवार ने आप जी का दिल की गहराई से स्वागत किया । गुरु साहिब यहाँ कुछ दिन ठहर कर अनंदपुर साहिब चले गये थे । एक प्रथा के अनुसार आप ने "कवियोवाच बेनती चौपई" इसी जगह पर उच्चारण की थी । यह गुरुद्वारा पहले छोटा सा था; अब इस की बड़ी खूबसुरत ईमारत बन चुकी है । साथ ही बहुत से रहने वाले कमरे भी है । लंगर का प्रबंध भी कमाल का है । गुरुद्वारे के दोनों ओर नदी तथा पहाड़ इस स्थान को रमणीक तथा ख़ूबसुरत बना देते है ।

गुरुद्वारा बाणगढ़ (नूरपुर बेदी) :

एक बार जब मुग़ल सेना ने अनंदपुर साहिब पर आक्रमण किया तो उन्हों ने नूरपुर बेदी में इस स्थान पर पड़ाव किया । एक प्रथा के अनुसार गुरु साहिब ने एक तीर चलाया जो उस पलंग के पाये में जा लगा जिस पर मुग़ल सेनापति (एक स्रोत के अनुसार गर्वनर लाहौर और गर्वनर सरहिन्द) बैठे थे । तीर देख कर उन्हों ने सोचा कि यह गुरु साहिब का चमत्कार है । फिर गुरु साहिब ने दूसरा तीर चलाया जो ठीक पहले वाले तीर की जगह पर जा लगा । इस तीर के साथ एक चिट् भी थी जिस पर लिखा हुआ था कि "यह चमत्कार नहीं कला है ।" इस के बाद उन्हों ने गुरु

साहिब पर आक्रमण करने का इरादा बदल लिया । इस घटना की याद में यह गुरुद्वारा बना हुआ है । १९९८ से इस का प्रबंध शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी ने सम्भाल लिया है ।

गुरुद्वारा दमदमा साहिब, कट्टा सबूर :

यह गाँव नूरपुर बेदी से बलाचौर वाली सड़क से एक किलोमीटर दूर है । गुरु गोबिन्द सिंघ साहिब १५ से २९ अक्तूबर तक बसाली में रहे थे । उस समय के दौरान आप इस गांव में भी गये थे । गुरु साहिब की उ़स यात्रा की याद में एक गुरुद्वारा बना हुआ है । इस गुरुद्वारे को "गुरुद्वारा कटार साहिब" भी कहा जाता है ।

गुरुद्वारा गुरपलाह :

यह गुरुद्वारा सुहां नदी के किनारे पर खेड़ा कलमोट तथा नंगल दोनों से कोई १० किलोमीटर दूर (हिमाचल की सीमा पर) है । इस स्थान पर बाबा कलाधारी, जो गुरु नानक साहिब के परिवार में से थे, गुरु गोबिन्द सिंघ साहिब को मिले थे । एक प्रथा के अनुसार बाबा कलाधारी जी ने गुरु साहिब को कहा कि हमारा वंश आगे नहीं चल रहा तो गुरु साहिब ने कहा कि अमृतपान कर के खालसा बन जाओ तो वाहिगुरु तुम्हारी सहायता करेंगे । इस पर बाबा कलाधारी ने अपने बेटे अजीत/जीत सिंघ को अमृत पान करवाया था । गुरु साहिब यहाँ पलाह के वृक्ष के नीचे बैठे थे । इस कारण इस गुरुद्वारे (तथा बाद में गांव का नाम भी) गुरपलाह हो गया ।

✲ ✲ ✲

अनंदपुर साहिब का होला महल्ला :

पंजाब के सब से अधिक महत्त्वपूर्ण 'त्यौहारों' में से अनंदपुर साहिब का "होला महल्ला" एक विशेष महत्त्व रखता है। आजकल होला महल्ला हिन्दूओं के त्यौहार होली के दूसरे दिन मनाया जाता है। इस की शुरूआत गुरु गोबिन्द सिंघ साहिब ने की थी। इतिहास के स्रोतों के अनुसार भाई नंद लाल 'गोआ' १६८२ में चक्क नानकी आये थे तथा इसी साल फल्गुण सुदी आठ से पूर्णिमा तक चक्क नानकी में बहुत रौनक रही। अगले वर्ष २ मार्च १६८३ के दिन हिन्दू होली मना रहे थे। गुरु साहिब के रंग डालने की व्यर्थ रस्म को बन्द करने के लिये ३ मार्च १६८३ के दिन 'होला महल्ला' शुरू किया। इस दिन चरणगंगा के किनारे पर खुले मैदान में गुरु साहिब ने शस्त्र चलाने तथा घुड़-दौड़ आदि के मुकाबले करवाये। इस अवसर पर भाई नंद लाल, कवि अमृत राय लाहौरी तथा भाई आलम चंद 'नच्चणा' ने खूब रौनक बढ़ाई। इस के बाद यह दिन हर वर्ष चक्क नानकी में 'होला महल्ला' के नाम से मनाया जाने लगा। १६८५ से १६८८ तक गुरु साहिब पांऊटा में रहे। आप ने पाऊंटा से आ कर इस दिन को चक्क नानकी में फिर मनाना शुरू कर दिया। इस दिन अनंदगढ़ साहिब से जलूस चल कर चरणगंगा के मैदान में किला होलगढ़ के बाहर पहुँचता था तथा वहाँ शस्त्र चलाने, गतका खेलने और घुड़ सवारी के मुकाबले हुआ करते थे। ५-६ दिसम्बर १७०५ की रात को गुरु साहिब अनंदपुर साहिब छोड़ गये। इस के बाद यह नगर तबाह कर दिये गये तथा साथ ही होला महल्ला भी मनाया जाना भी बन्द हो गया। १९वीं सदी के शुरू में यहाँ होला महल्ला फिर बड़ी शान के साथ मनाया जाने लगा। १८६०-६५ के दौरान इस होले-महल्ले पर इतनी रौनक होने लग पड़ी थी कि विशेष प्रबंध करने पड़ते थे। उस समय अनंदपुर साहिब जिला होशियारपुर का एक हिस्सा था। होशियारपुर के उस समय के जिला ग़ज़टीयर में इस 'त्यौहार' के सम्बंध में इस प्रकार विवरण मिलता है।

"इस जिले का बड़ा मेला अनंदपुर साहिब (माखोवाल) में होली के समय होता है । यह त्योहार अनंदपुर साहिब में दो दिन रहता है । त्योहार के दूसरे दिन, दोपहर के बाद, अलग-अलग गुरुद्वारों के ग्रंथी अपने अपने निशान साहिब ले कर बाहर निकलते है तथा शब्द गाते पास की नदी (चरणगंगा) तक आते है (यह वही स्थान है जहाँ गुरु साहिब "होला महल्ला" मनाया करते थे) । जब सभी निशान साहिब इकट्ठे हो जाते है तो दृश्य बड़ा ही मनमोहक तथा खूबसुरत होता है । ग्रंथियों तथा सिक्खों के दल अपने-अपने निशान साहिब के चारों ओर धीरे-धीरे चक्कर काटते हुये आगे बढ़ते हैं तथा लोगों से भेंट ले कर आशिर्वाद देते है । अनंदपुर साहिब के गुरुद्वारे का निशान साहिब काले रंग का है तथा उस के साथ नीले वस्त्र तथा नोकदार दस्तारें (जिन पर लोहे के चक्र सजे होते है) वाले निहंग विशेष कर देखने लायक होते है । वे जोश में अपने घोड़ों को इधर-उधर दौड़ाते हुये "अकाल ! अकाल !" के नारे लगाते है । वे ईशारों से मसनूही लड़ाई का दृश्य भी उपस्थित करते है जैसे कि अपना कौमी निशान साहिब की दुश्मन दल से रक्षा कर रहे होते है । कभी-कभी कोई दल लम्बी हेक तथा ऊँचे स्वर से गुरु जी की प्रशंसा में शब्द या कविता भी पेश करता है । सोढ़ी अपने सजाये हुये हाथियों तथा घोड़ों पर चढ़ कर बाहर आते है तथा संगतों को "दर्शन" देते है । वे लोगों से भेंट लेते है । इस अवसर पर लगभग ३० हज़ार लोग एकत्रित होते है । शाम के समय जलूस के रूप में अलग-अलग गुरुद्वारों को, निशान साहिब के नेतृत्व में, जलूस वापिस लौट जाते है जैसे कि वह कोई (मोर्चा) जीत कर वापिस जा रहे हों । सूरज डूबने के साथ आस-पास के लोग वापिस अपने-अपने गांवों को चले जाते है तथा भीड़ बहुत कम हो जाती है ।

यह मेला हमेशा ही ऐतिहासिक महत्त्व वाला मेला समझा जाता है क्योंकि इस अवसर पर बहुत से जोशीले निहंग सिंघ यहाँ इकट्ठे होते हैं । एक बार १८६४ में एक जोशीले सिंघ ने लुधियाना के एक ईसाई पादरी को मार डाला था (क्योंकि वह केसगढ़ साहिब में खड़ा हो कर ईसाई धर्म का प्रचार कर रहा था तथा उस ने गुरु गोबिन्द सिंघ की शान में बुरे शब्द कहे थे) । उस दिन से यहाँ पुलिस, मेजिस्ट्रेट तथा अन्य अफ़सर

भी काफ़ी संख्या में उपस्थित होते हैं । क्योंकि इन दिनों हिन्दू होली भी मनाते है इस कारण यहाँ होने वाले इकट्ठों में गन्दे गीत भी गाये जाते है'' ।

उपरोक्त रिर्पोट १८६०-६५ के समय मनाये जाने वाले मेले के सम्बंध में हैं । जब १९२३ में इस स्थान पर शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी का अधिकार हो गया तो उस के बाद इस मेले का पैर्टन बदल गया । १९४५ में छपी एक रिर्पोट में इस का विवरण इस प्रकार आता है :

''यह मेला पूरा एक सप्ताह रहता है । पहले तीन दिन मेला कीरतपुर साहिब में लगता है तथा चतुर्थ दिन मेले की भीड़ अनंदपुर साहिब में बढ़ जाती है । वैसे तो दस, पंद्रह दिन अनंदपुर साहिब में बहुत रौनक रहती है । कीरतपुर से अनंदपुर साहिब तथा अनंदपुर साहिब से गुरु का लाहौर तक लोगों के दल दृष्टिगोचर होते है । ऐसा लगता है कि सिक्खों के सिरों का समुद्र गरज रहा है । अलग-अलग दल लहरों की तरह चलते नज़र आते है ।

मेले के अन्तिम तीन दिन बहुत बड़े धार्मिक दीवान सजते है तथा राजनीतिक सम्मेलन होते है । शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, शिरोमणि अकाली दल, चीफ़ खालसा दीवान, दुआबा दीवान, मालवा दीवान, मैण दुआबा दीवान आदि दलों की ओर से बड़े-बड़े दीवान सजते है तथा गुरबाणी का कीर्तन होता है । ढाडी जत्थे वीर रस तथा ऐतिहासिक घटनाओं को गा कर संगतों को निहाल करते है । इस के इलावा काग्रेस, कम्युनिस्ट, सोशलिस्ट तथा अन्य राजनीतिक दल भी अपने सम्मेलन करते है । शहीदी बाग तथा अनंदगढ़ से लेकर केसगढ़ साहिब तक तथा केसगढ़ साहिब से सीसगंज तक बाज़ार लग जाता है तथा मेला देखने वालों की बड़ी रौनक होती है । केसगढ़ साहिब में इन दिनों सब से अधिक भीड़ होती है । हर यात्री पहले यहाँ आ कर माथा टेकता है ।

अब पहले जैसे गंदे गीत गाने वाला तथा शरारत करने वाला वातावरण नहीं होता । यह सब अकाली प्रबंध का नतीजा है । खालसा हाई स्कूल के मैदान में तीन दिन खेलों के मुकाबले होते है तथा फाईनल मैच आरम्भ हो जाते है । इस अवसर पर गतका तथा तलवार की खेलों के मुकाबले होते है । ग्यारह बजे के लगभग संगत तथा अन्य यात्री चरणगंगा नाले

वाले मैदान के दोनों ओर ऊचे स्थानों पर बैठना शुरू कर देते है । शाम चार बजे 'मिट्ठासर' के निहंग अपना निशान साहिब झुलाते हुये नगारे पर चोट लगाते हुये पहुँचते है । खालसा हाई स्कूल के पूरब की ओर चरणगंगा के किनारे एक स्थान पर पूला (सूखे वृक्ष) रख कर उस को आग लगाते है । इस के बाद शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के प्रबंध अधीन एक जलूस आता है । यह जलूस अनंदगढ़ से शुरू होकर केसगढ़ साहिब, दमदमा साहिब से होता हुआ होलगढ़ पहुँचता है तथा वहाँ से सीधे चरणगंगा की ओर हो जाता है । काफी सख्ंया में सिक्ख घोड़ों पर सवार होते है । नर-सिंघे बजाये जाते है, कुछ के साथ तो बैंड बाजे भी होते है । ऐसा लगता है कि जैसे कोई सेना आ रही हो जिस के पीछे सैकड़ों सिक्ख चल रहे हो । सभी के सिरों पर सुरमई या नीली दस्तारें, हाथ में तलवार, सफ़ा जंग, डंडा या कोई अन्य शस्त्र जरूर होता है । खालसा स्कूल के पास पहुँचने के बाद यह सारा जलूस उस स्थान पर पहुँचता है जहाँ पूले को आग लगाई जाती है । वहाँ पहुँच कर सभी बड़े जोश से वहाँ तलवारें, सफाजंग तथा डंडे मारते है जैसे कि दुश्मन दल पर आक्रमण कर रहे हो । यह कार्यवाही १४ मार्च १७०१ के होले-महल्ले की याद में भी की जाती है जब होला महल्ला के जलूस से होलगढ़ से अनंदपुर साहिब मुड़ते हुये लोहगढ़ में केसरी चंद जसवालीए की समाधि पर सिक्खों ने डंडे तथा जूते मार कर की थी । फिर सभी मोर्चा 'फतह' करने के बाद चरणगंगा के मैदान में लौट आते है । इस के बाद निहंग सिंघ अपने काले निशान साहिब झुलाते हुये घोडों पर सवार हो कर आते है । इन निहंगों ने अक्सर भांग पी होती है । वे बड़ी मस्ती में जैकारे लगाते है तथा फिर वे भी चरणगंगा के मैदान में लौट आते है । यहाँ शाम के लगभगा सात बजे तक घुड़-सवारी, नेज़ाबाज़ी, गतका, तलवार चलाने के खेल दिखाये जाते है ।

अन्त में निहंग सिंघ तथा अकाली सिंघ अपने-अपने निशान साहिब के साथ नगाड़े बजाते हुये लौट कर अपने-अपने स्थान पर चले जाते है। इस के बाद मेला कम होना शुरू हो जाता है ।

१९४५ की इस रिर्पोट का तथ आज के होले महल्ले के मनाये जाने में काफी फर्क पड़ गया है किन्तु मुख्य स्वर आज भी कायम है ।

अनंदपुर साहिब की वैसाखी

अनंदपुर साहिब में हर वर्ष मुख्य रूप मे दो सम्मेलन होते है । एक होला महल्ला तथा दूसरा पहली वैसाख के दिन । इन दोनों अवसरों का अपना विशेष महत्त्व है । होला महल्ला सिक्ख पंथ के मार्शल इतिहास के साथ सम्बंध रखता है तथा पहली वैसाख के दिन गुरु गोबिन्द सिंघ साहिब ने खालसा प्रगट किया था ।

सिक्ख धर्म में वैसाख की पहली तारीख का वैसे कोई विशेष महत्त्व नहीं । यह हिन्दु कैलेंडर (विक्रमी संवत्) के वैसाख महीने की संक्रान्ति है । सिक्ख धर्म में न तो विक्रमी कैलेंडर का कोई स्थान है तथा न ही संक्रान्ति का । "संगरांद" संस्कृत के शब्द "संक्रान्ति" का पंजाबी रूप है। इस का अर्थ है : सूरज का एक 'राशी' से दूसरी 'राशी' में प्रवेश होना । सिक्ख धर्म में न तो सूरज की पूजा होती है तथा न ही सिक्ख राशियों में विश्वास रखते हैं । गुरु साहिब ने पहली वैसाख इस कारण चुनी थी कि उन दिनों कैलेंडर, डायरी/जंतरी या पंचाग नहीं होते थे तथा तारीखों का पता पंडितों से लगता था क्योंकि पंडितों की रोजी ही तारीखों के नाम पर लोगों से भेंट, बखशीश, चंदा तथा चढ़ावा इकट्ठे करने पर निर्भर थी । कटाई के दिन नजदीक होने के कारण वैसाख की पहली तारीख का पता बड़ी आसानी से लग जाता था ।

कुछ विशेष दिनों पर सम्मेलन करने की प्रथा गुरु अमरदास साहिब ने शुरु की थी । उन्होंने माघ तथा वैसाख की पहली तथा हिन्दु दीवाली के अवसर पर साल में तीन बार सिक्खों के सम्मेलन करने शुरू किये थे । उन्होंने भी यह दिन इस कारण नहीं चुने थे कि यह दिन हिन्दु त्यौहारों के दिन थे बल्कि इस लिये चुने थे कि इन तारीखों का पता करना आसान था तथा कैलेंडर आदि न होने के कारण एक साधारण आदमी को पंडितों

नैना देवी

नैना देवी अनंदपुर साहिब से ९ किलामीटर दूर एक पहाड़ी है जिस पर एक मिथकीय हिन्दू देवी का मन्दिर बना हुआ है । नैना देवी गांव में अधिकतर पुजारी, मज़दूर तथा कुछ दुकानदार ही रहते है । गुरु साहिब के समय यहाँ की आबादी बहुत थोड़ी थी । उस समय इस मन्दिर में कोई एक-आध व्यक्ति ही जाता था । कुछ पंडितों ने यह भ्रम फैलाया हुआ था कि इस देवी के पास बड़ी ताकत है और यह यक्ष करने पर मुहँ मांगा वरदान देती है । गुरु साहिब इस आडम्बर को जानते थे लेकिन उन्होंने पंडितों का अहंकार तोड़ने के लिये उन्हें यज्ञ के लिये सारी सामग्री उपलब्ध करवाई । किन्तु जब पंडित बेपर्दा हो गये तो वह चुप-चाप वहाँ से खिसक गये । इस पर लोगों को नैना देवी का ज़रा सा भी भ्रम न रहा । एक बार भैरों नाम के एक सिक्ख ने देवी का नाक तोड़ डाला । पंडितों ने इस की शिकायत गुरु साहिब से की । गुरु साहिब ने सिक्खों को कहा कि भले किसी का विश्वास पत्थर में या किसी भी अन्य वस्तु में हो उस को चोट नहीं पहुँचानी चाहिये । फिर गुरु साहिब ने पंडितों को कहा कि जो देवी अपने नाक की रक्षा नहीं कर सकती, वह तुम्हें क्या देगी ?

नैणा देवी मन्दिर का सिक्खों के साथ थोड़ा सा भी सम्बंध नहीं है । कोई भी सिक्ख नैणा देवी के मन्दिर पूजा करने नहीं जाता । वैसे भी मन्दिर में पूजा करने वाला सिक्ख नहीं हो सकता । सिक्ख सिर्फ गुरु ग्रंथ साहिब के आगे माथा टेकता है ।

☆ ☆ ☆

से अक्सर ऐसे पता चलता रहता था कि क्योंकि पंडित प्राय: ऐसे अवसरों पर लोगों से बखशीश, चंदे, भेंट, सेपी, हंदा आदि मांगते रहते थे । वैसे यदि पहली वैसाख की या किसी माघी या दीवाली या होली की कोई विशेषता होती तो सभी गुरु साहिबान सभी कामों को इन तीनों चारों हिन्दु त्यौहारों के दिनों पर ही करते । बाबा गुरदित्ता (पुत्र गुरु हरि गोबिन्द साहिब) ने कीरतपुर की नींव ७ अप्रैल १६२४ के दिन (वैसाख की ११ तारीख) बाबा श्री चंद से रखवाई थी । गुरु तेग़ बहादुर साहिब ने चक्क नानकी की नींव १९ जून १६६५ (२१आषाढ) के दिन रखी थी । गुरु गोबिन्द सिंघ साहिब ने पाउंटा साहिब की नींव २८ अप्रैल १६८५ के दिन (पहली ज्येष्ठ) को रखी थी । किला अनंदगढ़ की नींव ३० मार्च १६८९ (२ वैसाख) के दिन रखी गई थी । गुरु गोबिन्द सिंघ साहिब के लिये ग्रंथों में किसी की भी शुरूआत या पूरे होने की तारीख वैसाख की पहली तारीख नहीं है । अर्थात् पहली वैसाख या किसी भी दिन की सिक्ख धर्म में कोई विशेषता नहीं थी तथा न है । इस दिन का चुनाव सुविधा की दृष्टि से तथा सिर्फ कैलेंडर की कमी के कारण ही किया गया था ।

जिस पहली वैसाख (२९ मार्च) वाले दिन गुरु साहिब ने 'सीस भेंट कौतुक' किया था उस दिन हज़ारों की सख्ंया में संगतें अनंदपुर साहिब पहुँची थी । केसगढ़ साहिब तथा आस-पास की पहाड़ियों पर, हर ओर, इतनी संगत थी कि तिल धरने की जगह भी नहीं थी । "गुरु की साखियों" का लेखक (शहीद कीरत भट्ट के वंश से) लिखता है कि खंडे का अमृत देने की रस्म कई दिन चलती रही थी तथा पाँच प्यारों के कई दल कई दिन तक संगतों को खंडे का अमृत देते रहे थे । 'शहीद बिलास' का लेखक भाई सेवा सिंघ इस का वर्ष १६९५ बताता है, "गुरु की साखियों" का स्वरूप (रूप) सिंघ १६९८ लिखता है किन्तु शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी १६९९ को खालसा प्रगट करने का साल मानती है । "गुरु की साखियों" के लेखक के अनुसार खालसा २९ मार्च १६९८ को प्रगट किया गया था तथा दूसरे साल वैसाख की पहली (२९ मार्च १६९९) के दिन सरबत खालसा का एक बड़ा सम्मेलन अनंदपुर साहिब में हुआ था । इस समारोह में हज़ारों की संख्या में सिक्ख अनंदपुर साहिब में, नीली दस्तारें

बांध कर, नीले निशान साहिब लहराते हुये पहुँचे थे । दोनों साल वैसाख की पहली २९ मार्च को थी (कुछ किताबों में गलती से ३० मार्च लिखी गई थी जो कई लेखक चुप चाप मान गये) ।

अनंदपुर साहिब का होला महल्ला दुनिया भर में मशहूर है । गुरु साहिब ने रंग डालने की व्यर्थ रस्म से सिक्खों को हटाने के लिये इस दिन होला महल्ला शुरू किया था । इस दिन सिक्ख शस्त्र चलाने तथा अन्य मार्शल खेलों में हिस्सा लिया करते थे । किन्तु गुरु गोबिन्द सिंघ साहिब की ओर से खालसा प्रगट करना अनंदपुर साहिब के इतिहास का सब से महत्त्वपूर्ण दिन था जिस ने अनंदपुर साहिब को दुनिया भर के इतिहास तथा दुनिया के नक्शे में प्रसिद्ध बना दिया । सिक्ख कौम के लिये इस अवसर की याद को मनाया जाना सब से अधिक महत्त्व रखता है । किन्तु अनंदपुर साहिब में पहली वैसाख पर इतना बड़ा सम्मेलन नहीं होता रहा जितना कि होला महल्ला के दिन हुआ करता है । १९९९ में खालसा प्रगट करने की तीसरी शताब्दी सम्बंधी होने वाला समारोह सभी कमियों को पूरा कर देगा । इस दिन के सम्बंध में होने वाले अलग-अलग समारोहों में लगभग २५ लाख सिक्खों के शामिल होने का अनुमान है । हर सिक्ख का कर्त्तव्य है कि यदि वह १४ अप्रैल १९९९ या २९ मार्च के दिन इस साल नहीं आ सकता तो वह किसी अन्य दिन अनंदपुर साहिब जरूर आये तथा केसगढ़ साहिब माथा टेक कर किसी जगह अकेला बैठकर अपने आप से यह सवाल अवश्य करे कि : "क्या मैं गुरु गोबिन्द सिंघ साहिब का पुत्र हूँ ? क्या मैं अनंदपुर साहिब का वासी हूँ ? क्या मैं सिक्ख हूँ ? क्या मैं वाहिगुरु जी का 'खालसा' हूँ ?"

हर सिक्ख का कर्त्तव्य है कि वह गुरु गोबिन्द सिंघ साहिब की ओर से खालसा प्रगट करते समय किये गए ऐलाननामे पर अमल करे और गुरु साहिब का सच्चा सपुत्र तथा अनंदपुर साहिब का वासी बने ।

☆ ☆ ☆